षोडश संस्कार।

उत्तम सस्कारोंके कारण, कर्मवीर योद्धा बलवान।
होते हैं अकलङ्क देवसे, ज्ञाता उच्च प्रौढ़ विद्वान ॥

"सतीश"

सम्पादक —
पं० लालाराम शास्त्री।



वीतरागविज्ञानम्।

षोड़श संस्कार।

सम्पादकः—पं० लालारामजी शास्त्री,

प्रकाशकः—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय।

११, लोअर चितपुर रोड,

कलकत्ता।

बसंतपंचमी १९८०
वीर सं० २४५० } १९२४ { न्यौछावर १)

प्रकाशक—

दुलीचन्द पन्नालाल, दिवाकर,
मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,
१३, लोअर चितपुर रोड, कलकत्ता ।



प्रथमवार १००० प्रति



PRINTED BY
KISHORI LALL KEDIA
AT THE
BANIK PRESS
1, SIRCAR LANE, CALCUTTA.

प्रकाशकके दो शब्द।

आज मुझे अपने पाठकोंकी सेवामें यह एक आवश्यकीय ग्रन्थ भेंट करते हुए महान् आनंद हो रहा है। ग्रन्थका परिचय हमारे परम मित्र पं० सतीशचंदजी न्यायतीर्थने भूमिका द्वारा अच्छी तरहसे करा दिया है, इसके लिये हम पंडितजीके कृतज्ञ हैं।

श्रीमान् पं० लालारामजी शास्त्रीने इस परम उपयोगी ग्रंथका संपादन करके वास्तवमें जैन समाजका बहुत उपकार किया है एतदर्थ उन्हें धन्यवाद है।

हमारा विचार था कि इसे सचित्र बनाया जाय, परन्तु कई एक कारणोंसे इसे हम सादा ही निकाल रहे हैं। दूसरा संस्करण इसका शीघ्र ही होगा उस समय ग्रंथका कलेवर और दर्शनीय चित्रोंकी वृद्धि भी की जायगी।

वसंत पंचमी सं० १९८० कलकत्ता	विनीतः— दुलीचंद पन्नालाल, दिवाकर

भूमिका



जैन समाजमें ही क्या अन्य अन्य समाजोंमें भी संस्कारोंकी इतनी आवश्यकता है कि इनके बिना आत्मोद्धार, आत्मनिष्ठा, ओज, बल, वीर्य, परोपकारता, सत्यपरायणता आदि २ गुणोंका होना असम्भवसा ही है। इसीलिये उन विशिष्ट गुणोंकी प्राप्तिके लिये आज यह हस्तगत पुस्तक "षोडश संस्कार" समाजके सामने उपस्थित की जाती है।

यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि जिन संस्कारोंका प्रभाव गर्भसे लेकर जन्म पर्यन्त या अन्य अवस्थामें पड़ता है, वह मरण पर्यन्त नहीं छूटता। यदि संस्कार अच्छे होंगे तो बालक भी बल, बुद्धि, वीर्य, ओज, प्रताप आदि गुणोंसे सम्पन्न होगा और संस्कार कुत्सित—मलीन होंगे तो बालक भी निर्बल, निर्बुद्धि, निर्वीर्य, ओज रहित, निष्प्रतापी उत्पन्न होगा। अतएव भारतके प्रत्येक गृहस्थको इन संस्कारोंके करनेकी बड़ी भारी आवश्यकता है, तथा समाजके हितके लिये ही "श्री जिनवाणी प्रचारक कार्यालय" ने इसकी पूर्त्ति की है।

इन षोडश संस्कारोंके विषयमें यह बात अवश्य कहना है कि कुछ व्यक्ति हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा लिखित संस्कार आदिके ग्रन्थोंको कपोल कल्पित समझते हैं, परन्तु मैं उनसे सानुरोध कहता हूं कि यह उनकी बड़ी भारी भूल है। यह जो छोटी सी

संस्कार सम्बन्धी पुस्तक आपके कर कमलोंमें विराजमान है वह उन प्रातःस्मरणीय भगवज्जिनसेनाचार्य प्रणीत है। यथा आदि पुराणके ३८ वें पर्वमें इन संस्कारोंका पूर्ण रूपसे वर्णन किया गया है। वास्तवमें श्रीमज्जिनसेनाचार्यने आदिपुराण सरीखे ग्रन्थराजको बनाकर समाजका असीम कल्याण किया है।

इस पुस्तकके महत्त्वके लिये इतना और कह देनां बस होगा कि इसमें गर्भसे लेकर मरण पर्यन्त तक मनुष्यको क्या क्या करना चाहिये ये सब बातें स्पष्टतया बतला दीं हैं। प्रथम ही आप होम—हवनको ले लीजियेः— समाजके कितने व्यक्ति होम करते हैं? तो उत्तर मिलेगा कि कोई नहीं, और यदि कोई करता भी हो तो शायद १००में एक व्यक्ति करता हो। परन्तु अब आप विचार कर देखें कि इस होमके न करनेसे घर घरमें प्राय. आरी, मारी, प्लेग, हैजा आदि रोगोंका प्रकोप होता रहता है, तथा दुःख दारिद्र बढ़ता ही जाता है। खासकर धार्मिक क्रियामें भी बाधा पड़ती है, किन्तु इसके विरुद्ध अर्थात् होम करनेसे उपर्युक्त बातें नहीं होती, हवा शुद्ध रहती है, गृह देवता प्रसन्न रहते हैं। जिन मन्त्रोंसे हवन किया जाता है उनसे धन, ऐश्वर्य, लक्ष्मी, सुखकी वृद्धि होती है, लोकमें कीर्त्ति होती है, इसलिये प्रत्येक जैनीका कर्त्तव्य है कि वह सदैव हवन किया करे। होमकी विधि इसमें विस्तार पूर्वक बतला दी है।

संस्कारोंमें भी यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक क्रियाको पूर्ण रीतिसे करना चाहिये। आधानादि क्रियाओंमें जो जो रीति कही गई है, वह सब विचार कर ही लिखी गई

यह मन्त्र पढ़कर क्षेत्रपालको बलि अर्थात् नैवेद्य देवे। "ओं ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्न विनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट स्वाहा" (इति भूमि सम्मार्जनम्)

यह मन्त्र पढ़कर दर्भपूलसे भूमि शोधन करे। अर्थात् दर्भपूल (थोड़ेसे डाभोंकी गट्ठी) से भूमिको झाड़े।

"ओं ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा"। (इति भूमिसेचनम्)

यह मन्त्र पढ़कर भूमिपर दर्भपूलसे थोड़ा पानी छिड़के। "ओं ह्रीं अग्निकुमाराय ह्म्ल्व्र्यूं ज्वल ज्वल तेजःपतये अमिततेजसे स्वाहा"। (इति दर्भाग्निज्वालनम्।)

यह मन्त्र पढ़कर थोड़े सूके डाभ उस भूमिपर जलावे। "ओं ह्रीं क्रों षष्ठिसहस्रसंख्येभ्यो नागेभ्यः स्वाहा" (इति नागतर्पणम्)

यह मन्त्र पढ़कर नागोंको एक अर्घ्य देवे।

षोड़स संस्कार।

होमविधि।

आधानादि निखिल संस्कारोंमें होम करना अत्यावश्यक है। होमकी संक्षेप विधि इस प्रकार है।

संस्कारोंमें जो होमादि क्रिया की जाती है वह प्रायः घर पर ही होती है। इसलिये घरके किसी उत्तम भागमें आठ हाथ लम्बी आठ हाथ चौड़ी एक हाथ ऊंची तीन कटनोकी एक वेदी* बनावे। इस वेदीके ऊपर पश्चिमकी

---

* यह वेदी कुण्ड आदि सब मुहूर्त्तसे एक दो दिन पहले तैयार किये जाते हैं। यदि कहीं पर एक दो दिन पहले तैयार करनेका समय न मिले और उसी समय तैयार कराने की आवश्यकता आ पड़े तो पृथ्वीपर ही रंगावलीसे तीन प्रकारके रंगोंसे एक हाथ लंबा चौड़ा चौकोर पूरकर कुंड बना लेना चाहिये और उसीमें होम करना चाहिये।

ओर एक हाथ जगह छोड़ कर एक हाथ लम्बी एक हाथ चौड़ी एक हाथ ऊंची एक छोटी वेदी और बनावे इसमें भी तीन कटनी हों। इस छोटी वेदी पर श्री जिनेन्द्रदेवकी प्रतिमा स्थापन करें। प्रतिमाके सामने तीन छत्र तीन चक्र (धर्मचक्र) और स्वस्तिक (साथिया) स्थापन करे, प्रतिमाके दाईं ओर यक्ष और बाईं ओर यक्षीको स्थापन करे।

इस छोटी वेदीके सामने एक हाथ जगह छोड़कर तीन कुण्ड बनावे, बीचका कुण्ड अरत्नि* लम्बा एक अरत्नि चौड़ा एक अरत्नि गहरा चतुष्कोण (चौकोर) बनावे, इस कुण्डके ऊपरके भागमें चारों ओर तीन तीन मेखला बनावे।

इस कुण्डके दक्षिण†की ओर (दाईं ओर)

---

* (बद्धमुष्टिकरोऽरत्निः) मुट्ठी बंधे हुए एक हाथको अरत्नि कहते हैं। यह एक हाथसे चार पांच अंगुल कम होता है।

† इस प्रकरणमें जिधर प्रतिमाका मुख हो वह पूर्व दिशा मानी जाती है। इसी दिशाके अनुसार और दिशायें कल्पना करना चाहिये।

त्रिकोण कुण्ड बनावे। इस कुण्डकी तीनों भुजायें एक एक अरत्नि लम्बी हो गहराई भी एक ही अरत्नि हों, तीनों भुजाओंमें चतुष्कोण कुण्डके समान मेखला भी तीन तीन हों। तथा चतुष्कोण कुण्डके उत्तर की ओर गोल कुण्ड बनावे जिसका व्यास और गहराई एक अरत्नि हो, तथा मेखला भी तीन हों।

इन सब कुण्डोंकी मेखलाओंमें से प्रथम मेखला की चौड़ाई ऊंचाई पांच मात्रा (पांच अंगुल) द्वितीय मेखलाकी चार मात्रा और तृतीय मेखलाकी चौड़ाई उंचाई तीन मात्रा होनी चाहिये। तथा प्रत्येक कुण्डका अन्तर एक मात्राका होना चाहिये।

इन कुण्डोंकी आठो दिशाओंमें आठ दिक्पालोंके पीठ (स्थान) बनावे। यह सब बनाकर जलादिकसे शुद्धता कर सबकी पूजा करे। प्रथम ही चतुष्कोणको त्रिकोणको और फिर गोल कुण्डको जल चन्दनादिकसे चर्चे।

इनमेंसे चतुष्कोणको तीर्थंकर कुण्ड, त्रिकोणको गणधर कुण्ड और गोलकुण्डको शेष केवली संज्ञा है, तथा चतुष्कोणकी अग्निकी गार्हपत्य त्रिकोण कुण्डको अग्निकी आह्वनीय और वृत्त कुण्डकी अग्निकी दक्षिणाग्नि संज्ञा है। बड़ा वेदीके चारों कोनोंपर चार खम्भ खड़े करे, ऊपर चंदोवा बांधदे। खम्भोंके सहारे ऊख और केलेके वृक्ष सुशोभित करे। तथा घंटा तोरण माला मोतियोंकी माला आदिसे सुसज्जित करे, तथा चमर, दर्पण, धूप, घट, करताल, (पंखा) ध्वजा, कलश आदि द्रव्य भी यथा स्थान रक्खे।

विशेष—ऊपर तीन कुण्ड बनानेकी विधि लिखी है। परन्तु यदि और भी संक्षेप करना हो तो एक चतुष्कोण कुण्डसे ही काम चल सकता है एक चतुष्कोण कुण्ड ही बनाकर उसीमें सब आहुति डालनी चाहिये।

स्रुक् और स्रुवा ।

अग्निमें जिस पात्रसे होम द्रव्य डाले जाते हैं उसे स्रुवा कहते हैं । तथा जिससे घी डालते हैं उसे स्रुक् कहते हैं। क्षीरवृक्षका (वटवृक्ष जिसको बरगद् कहते हैं) स्रुक् और चन्दनका स्रुवा । बनावे जो ये दोनों लकड़ी न मिलें तो दोनों पीपलकी लकड़ीके बनावे जो पीपलकी लकड़ी भी न मिले तो दोनोंके बदले पीपलके पत्ते काममें लावे। जो पीपलके पत्ते भी न हों तो पलाश (ढाक) अथवा बरगद्के पत्ते काममें लावे।

स्रुक् गौकी पूंछके समान लम्बे मुखका बनावे तथा स्रुवा नाकके समान चौड़े मुखका बनावे। इन दोनोंकी लम्बाई एक एक अरत्नि हो। जिसमेंसे नाभि दण्ड छः अंगुलका हो।

समिधा

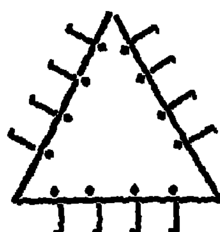
जो लकड़ी होममें डाली जाती है उसे समिधा कहते हैं। पीपल पलाश शमी (वृक्ष विशेष)

तथा बरगद्की लकड़ीकी समिधा बनानी चाहिये। समिधाकी प्रत्येक लकड़ी सीधी तथा दश अथवा बारह अंगुल लम्बी होनी चाहिये। शमोकी लकड़ी तोड़नेके दिनसे छः महीने तक होमके काममें आ सकती है खदिर (खैर) और पलाशको लकड़ी तीन महीने तक और पीपलकी लकड़ी रोज की रोज काममें आती है। अपामार्ग और अर्क (आक) एक दिनका तथा बरगद उदंबर आदिकी लकड़ी तीन दिनकी काममें आ सकती है। जो समिधा-की कोई लकड़ी न मिले तो समिधाके बदले कुश काममें लाने चाहिये। कुश एक महीने पहले तोड़े हुए काममें आ सकते हैं और दूर्वा (दूब) उसी समय तोड़कर काममें लानी चाहिये।

प्रतिमाके दाईं ओर धर्मचक्र बाईं ओर छत्र त्रय सामने पूर्ण कुम्भ और अगल बगल यक्ष यक्षीको स्थापन करे।

होम करनेवाला कुण्डोंके पूर्व दिशाकी ओर

दर्भासन पर पद्मासन मारकर पश्चिमकी ओर (प्रतिमाके सन्मुख) मुख कर बैठे। होमादि द्रव्योंको यथास्थान स्थापनकर परिचारकोंको (सहायता देनेवाले शिष्यवर्गोंको) अपने २ काममें नियुक्त करे। होमकी समाप्ति पर्यन्त मौनव्रत धारणकर परमात्माका ध्यानकर श्री जिनेन्द्रको अर्घ्य दे, तर्पण कर बीचके तीर्थंकर कुण्डमें सुगंधि द्रव्यसे अग्निमंडल लिखे। अग्निमंडलका चित्र यह है :—



अनन्तर एक दर्भपूलमें थोड़ासा लाल कपड़ा लपेटकर मन्त्र पढ़ते हुए अग्निको जलावे साथमें घी भी डालता जाय।

अग्नि जलानेके बाद आचमन प्राणायाम

और स्तुतिकर अग्निका आह्वानन करे तथा एक अर्घ्य देवे।

फिर गार्हपत्य अग्निमेंसे थोड़ीसी अग्नि लेकर उत्तर दिशाके गोल कुण्डमें अग्नि जलावे तथा गोलकुण्डमेंसे अग्नि लेकर दक्षिण दिशाके त्रिकोण कुण्डमें अग्नि जलावे।

होम करनेवाला हाथको ऊंचा उठाकर उंगलियोंको मिलाकर उंगलियोंपर अंगूठेको रखकर मन्त्र पढ़ता हुआ आहुति देवे।

बीचमें जो घीकी आहुति दी जाती है। वह इसप्रकार देवे कि जिससे अग्निकी ज्वाला बढ़ जाय। जो ज्वाला अधिक बढ़ गई हो तो दर्भपूलसे गायके दूधका सींचन करे।

बालुका होम।

भूमिको गोमय (गोबर) से लीपकर उसपर गन्धोदकका छिड़काव देकर एक हाथ लम्बी एक हाथ चौड़ी भूमिमें नदीकी बालू बिछावे।

उसपर पीपल अथवा अन्य वृक्षोंकी लकड़ियों-को शिखरके आकार बनाकर रक्खे। फिर उसको प्रज्वालनकर (जलाकर) नवग्रह तिथि देवता दिक्पाल और शेष देवोंके लिये उसमें आहुति देवे।

इसमें भी आचमन तर्पणादिक पूर्व होमोंके समान ही किया जाता है।

होम कब करना चाहिये?

व्रतावतरण, विवाह, सूतक, पातक, जिन मन्दिर प्रतिष्ठा, नूतन गृहनिर्माण (नया घर बन जानेपर) ग्रहपीड़ा और महारोगादिककी शान्ति करनेके लिये तथा आधानादि विधानों-में होम करना चाहिये। तर्पण—पुष्प, अक्षत, चन्दन और शुद्ध जलसे करना चाहिये।

होम के भेद।

होम तीन प्रकार है। जलहोम, वालुका-होम और कुण्ड होम।

जल होम।

जल होमके लिये मिट्टी अथवा तांबेका गोल-कुण्ड होना चाहिये, जो चन्दन, अक्षत, माला आदिकसे सुशोभित हो, जिसमें उत्तम जल भरा हो और जो धोये हुये शुद्ध चावलोंके पुंज-पर रक्खा हो ऐसे जलकुण्डमें दिक्पाल और नवग्रहोंको आहुति देवे। दिक्पालोंको सात धान्योंसे और नवग्रहोंको तीन धान्योंसे आहुति देवे अन्तमें नारियल अथवा और किसी पके फलसे पूर्णाहुति देवे।

सप्त धान्य—चना, उड़द, मूंग, गेहूं, धान, जौ, तिल।

तीन धान्य—तिल, धान्य, जौ।

होमविधि—

प्रथम ही होमशालामें जाकर "ओं ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा „ यह मन्त्र पढ़कर एक पुष्पांजलि भूमिमें देवे। "ओं ह्रीं अत्रस्थक्षेत्रपालाय स्वाहा"

यह मन्त्र पढ़कर क्षेत्रपालको वलि अर्थात् नैवेद्य देवे। "ओं ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्न विनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट स्वाहा" (इति भूमि सम्मार्जनम्)

यह मन्त्र पढ़कर दर्भपूलसे भूमि शोधन करे। अर्थात् दर्भपूल (थोड़ेसे दाभोंकी गट्ठी) से भूमिको झाड़े।

"ओं ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा"। (इति भूमिसेचनम्)

यह मन्त्र पढ़कर भूमिपर दर्भपूलसे थोड़ा पानी छिड़के। "ओं ह्रीं अग्निकुमाराय ह्म्ल्व्र्यूं ज्वल ज्वल तेजःपतये अमिततेजसे स्वाहा"। (इति दर्भाग्निज्वालनम्।)

यह मन्त्र पढ़कर थोड़े सूके दाभ उस भूमिपर जलावे। "ओं ह्रीं क्रौं षष्ठिसहस्रसंख्येभ्यो नागेभ्यः स्वाहा" (इति नागतर्पणम्)

यह मन्त्र पढ़कर नागोंको एक अर्घ्य देवे।

ओं ह्रीं भूमिदेवते इदं जलादिकमर्चनं गृहाण गृहाण स्वाहा (इति भूम्यर्चनम्)

यह मन्त्र पढ़कर भूमिकी पूजा करनेके लिये एक अर्घ्य देवे।

"ओं ह्रीं अर्हं क्ष्वं वं वं श्रीपीठस्थापनं करोमि स्वाहा" (इति होमकुण्डात्प्रत्यक् पीठस्थापनम्)

यह मन्त्र पढ़कर होमकुण्डके पश्चिमकी ओर एक सिंहासन स्थापन करे।

'ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः स्वाहा, (श्रीपीठार्चनम्)

यह मन्त्र पढ़कर सिंहासनकी पूजा करे। अर्थात् एक अर्घ देवे।

"ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जगतां सर्वशान्तिं कुर्वन्तु श्रीपीठे प्रतिमास्थापनं करोमि स्वाहा"

(श्रीपीठे प्रतिमास्थापनम् ।)

यह मन्त्र पढ़कर सिंहासनपर प्रतिमा स्थापन करे।

ओं ह्रीं अर्हं नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा। ओं

ह्रीं अर्हं नमः परमात्मकेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनादिनिधनेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमो नृसुरासुरपूजितेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तज्ञानेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तदर्शनेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तवीर्येभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्त सौख्येभ्यः स्वाहा (इति अष्टाभिर्मन्त्रैःप्रतिमार्चनम्) ये आठ मन्त्र पढ़ कर प्रतिमाकी पूजन करे।

ओं ह्रीं धर्मचक्रायाप्रतिहततेजसे स्वाहा (इति चक्रत्रयार्चनम्)यह मन्त्र पढ़ कर चक्रत्रयका पूजन करे।

ओं ह्रीं श्वेतछत्रत्रयश्रिये स्वाहा (इति छत्रत्रय पूजनम्) यह मन्त्र पढ कर छत्रत्रयको एक अर्घ देवे।

'ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ह्सौं ह्रौं सर्वशास्त्रप्रकाशिनि वद वद वाग्वादिनि अवतर अवतर अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः सन्निहिता भव

भव वषट् क्लूं नमः सरस्वत्यै जलं निर्वपामि स्वाहा एवं गन्धाक्षतपुष्पचरुदीपधूपफलवास्त्राभरणादिकम् (इति प्रतिमाग्रे सरस्वतीपूजा)

यह मन्त्र पढ़ कर प्रतिमाके आगे जल गंधाक्षतादिकसे सरस्वतीकी पूजा करे।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र पवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणाष्टादशसहस्रशीलधरगणधरचरणाः आगच्छत आगच्छत संवौषट् अत्र तिष्ठित तिष्ठित ठः ठः सन्निहिता भवत भवत वषट् नमो गणधरचरणेभ्यः जलं निर्वपामि स्वाहा। एवं गंधाक्षतपुष्पादिकम्। (इति गुरुपादपूजा) इस मन्त्रसे गुरुकी पूजा करे।

ओं ह्रीं कलियुगप्रबन्धदुर्मार्गविनाशन परमसन्मार्गपरिपालनभगवन्यक्षेश्वरजलार्चनं गृहाण गृहाण (इति जिनस्य दक्षिणे यक्षार्चनम्) यह मन्त्र पढ़ कर श्रीप्रतिमाके दक्षिण भागमें यक्षदेवकी पूजा करे।

ओं ह्रीं कलियुग प्रबन्धदुर्मार्गविनाशिनि

सन्मार्ग प्रवर्त्तिनि भगवति यक्षीदेवते जलाद्य-र्चनं गृहाण गृहाण।(इति वामभागे शासनदेव-तार्चनम्)

इस मन्त्रसे श्री प्रतिमाके वाम भागमें शासन देवताकी पूजा करे।

ओं ह्रीं उपवेशनभूः शुद्ध्यतु स्वाहा (इति होमकुण्डपूर्वभागे दर्भपूलेनोपवेशनभूमिशोधनम्)

यह मन्त्र पढ़ कर होम कुंडके पूर्वभागमें बैठनेकी भूमि शुद्ध करे।

ओं ह्रीं परब्रह्मणे नमो नमः ब्रह्मासने अह-मुपविशामि स्वाहा (इति होमकुण्डाग्रे पश्चि-माभि मुखं होता उपविशेत्)

यह मन्त्र पढ़ कर होम करने वाला-होम कुण्डके पश्चिमकी ओर मुख कर बैठे।

ओं ह्रीं स्वस्तये पुण्याहकलशं स्थापयामि स्वाहा। (इति शालिपुञ्जोपरिफल सहित पुण्याहकलशस्थापनम्।)

यह मन्त्र पढ़ कर एक चावलोंका पुंज रख

कर उस पर पुण्याह वाचनाका कलश स्थापन करे। कलश पर नारियल अथवा और कोई फल अवश्य होना चाहिये।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगञ्छकेसरि पुण्डरीकमहापुण्डरीकगंगासिंधुरोहि तास्याहरिद्धरि कान्ता सीता सीतोदा नारीनरकान्तासुवर्णारूप्यकूलारक्तारक्तोदा— पयोधिशुद्ध जल सुवर्णघटप्रक्षालित व रत्न गन्धाक्षतपुष्पोर्चितमामोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झौं झौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः। (इति जलेन प्रसिञ्च्य जल पवित्री करणम्)

यह मन्त्र पढ कर उस स्थापन किये हुए कलशका जल पवित्र करे। अर्थात् उपर्युक्त मन्त्र पढते हुए दूसरे जलसे उस स्थापन किये हुए कलशको सींचे। उस कलश पर थोड़ा २ पानी डाले।

ओं ह्रीं नेत्राय संवौष्यट् (इति कलशा-

'र्चनम्) यह मन्त्र पढ़कर कलश की पूजा करे।

अनन्तर होम करनेवाला आचार्य बायें हाथमें कलश लेकर पुण्याहवाचन पढ़ता हुआ दायें हाथसे भूमिको सींचे अर्थात् भूमिपर थोड़ा २ पानी डाले। पुण्याहवाचन पूरा होजाने पर उस कलशको कुण्डके दक्षिण भागमें स्थापन करदे। पुण्याहवाचन मन्त्र यह है—

पुण्याहवाचन मंत्रः।

ओं पुण्याहं पुण्याहं प्रीयन्तां प्रीयन्तां भगवन्तो ऽर्हन्तः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः सकलकार्याः सकलसुखास्त्रिलोकेशास्त्रिलोकेश्वरपूजितास्त्रिलोकनाथास्त्रिलोकमहितास्त्रिलोकप्रद्योतनकराः ओं वृषभाजितशंभवाभिनन्दनसुमतिपद्मप्रभसुपार्श्व चन्द्रप्रभः पुष्पदन्तशीतलश्रेयो वासुपूज्यविमलानन्तधर्म शान्ति कुंथुअरमल्लिमुनिसुव्रत नमि नेमिपार्श्वनाथश्रीवर्द्धमानशान्ताः शान्तिकराः सकलकर्मरिपुविषयकान्तारदुर्गविषमेषु रक्षन्तु

नो जिनेन्द्राः सर्वविदश्च । श्री ह्री धृतिविजय कीर्ति-
बुद्धिलक्ष्म्यो मेधाविन्यः सेवाकृषिवाणिज्यवाचरे-
ख्यमन्त्रसाधनचूर्णिप्रयोगस्थानगमनसिद्धसाध-
नाया प्रतिहतशक्तयो भवन्तु नो विद्यादेवताः ।
नित्यमर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधवश्च भगव-
न्तो नः प्रीयन्तां प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् । आदि-
त्यसोमांगारकबुधबृहस्पतिशुक्रशनैश्चरराहुकेतुग्र-
हाश्च नः प्रीयन्तां प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् । तिथि-
करणमुहूर्त्तलग्नदेवता इह चान्यग्रामादिष्वपि
वासुदेवताः सर्वे गुरुभक्ता अक्षीण कोशकोष्ठा-
गारा भवेयुः । ध्यानतपोवीर्यधर्मानुष्ठानादिमे-
वास्तु मातृपितृभ्रातृसुतसुहृत्स्वजनसम्बधिबन्धु-
वर्गसहितानां धनधान्यैश्वर्यद्युतिबलयशो वृद्धि-
रस्तु सामोदप्रमोदोऽस्तु शान्तिर्भवतु कान्तिर्भवतु
तुष्टिर्भवतु पुष्टिर्भवतु सिद्धिर्भवतु काममांग-
ल्योत्सवाः सन्तु शाम्यन्तु घोराणि पुण्यं वर्द्ध-
ताम् धर्मो वर्द्धताम् यशो वर्द्धताम् श्रीश्च वर्द्ध-
ताम् कुलं गोत्रं चाभिवर्द्धताम् स्वस्तिभद्रं चास्तु

नः हन्तारस्ते परिपन्थिनः शत्रुर्निधनं यातु निःप्रती पमस्तु शिवमतुलमस्तु सिद्धा सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः स्वाहा ।

इति पुण्याहवाचन मंत्रः ।

ओं ह्रीं स्वस्तये मङ्गलकुम्भं स्थापयामि स्वाहा (इति वामे मङ्गलकलशस्थापनम् । तत्र स्थालीपाकप्रोक्षणपात्रपूजाद्रव्यहोमद्रव्यस्थापनम्)

यह मन्त्र पढ़कर कुण्डके बाईं ओर मंगल-कलश स्थापन करना चाहिये और उसीके पास स्थालीपाक (गंध पुष्प अक्षत फल आदि-से सुशोभित पांच पंचपात्र*) प्रोक्षणपात्र (प्रोक्षण करने योग्य रकाबी) पूजा और होमकी सामग्री रक्खे ।

ओं ह्रीं परमेष्ठिभ्यो नमो नमः (इति पर-मात्मध्यानम्)

यह मन्त्र पढ़कर परमात्माका ध्यान करे ।

---

* तांबेके छोटे छोटे गिलासोंको पंचपात्र कहते हैं ।

ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं ध्यातृभिरभी-प्सितफलदेभ्यः स्वाहा। (इति परमपुरुषस्यार्घ्य-प्रदानम्)

यह मन्त्र पढ़कर परमात्माको अर्घ्य देवे।

ओं ह्रीं नीरजसे नमः ओं दर्पमथनाय नमः।

ये दोनों मन्त्र कुंडमें लिखे और फिर जल दर्भ गंध अक्षतादिकसे कुण्डकी पूजा करे।

ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्निं स्थापयामि स्वाहा (अग्नि स्थापनम्)

यह मन्त्र पढ़कर कुंडमें अग्नि स्थापन करे।

ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं दर्भं निक्षिप्य अग्निसन्धुक्षणं करोमि स्वाहा (अग्निसन्धुक्षणम्)

यह मन्त्र पढ़कर कुंडमें दर्भ डालकर अग्नि जलावे।

ओं ह्रीं क्ष्वीं क्ष्वीं वं मं हं सं तं पं द्रां द्रां हं मः स्वाहा (आचमनं)

यह मन्त्र पढ़कर आचमन करे।

ओं भूर्भुवः स्वः अ सि आ उ सा अर्हं प्राणायामं करोमि स्वाहा (त्रिरुच्चार्य प्राणायामः)

यह मन्त्र पढ़कर तीनवार*प्राणायाम करे।

ओं नमोऽर्हते भगवते सत्यवचनसंदर्भाय केवलज्ञानदर्शन प्रज्वलनाय पूर्वोत्तराग्रं दर्भपरिस्तरणमुदम्बरसमित्परिस्तरणं च करोमि स्वाहा (इति होमकुण्डस्य चतुर्भुजेषु पञ्च पञ्च दर्भ-वेष्टितेन परिधिबन्धनम्)

यह मन्त्र पढ़कर होम कुण्डका परिधिबन्धन करे अर्थात् पांच पांच दर्भ मिलाकर उनमें थोड़ी ऐंठ देकर कुण्डके चारों ओर रक्खे। दक्षिण और उत्तरकी ओर रक्खे हुए दर्भोंका

---

* पांचो उंगलियोंसे नाक पकड़ अंगूठेसे दायें छिद्रको दबाकर बायें छिद्रसे वायु ऊपरकी ओर खींचे। पूरा वायु खींच लेनेपर बायें छिद्रको भी बंद कर दे। इसी समय इस मन्त्रका ध्यान करे। फिर अंगूठेको ढीलाकर दायें छिद्रसे वायुको धीरे धीरे निकाले इसीको प्राणायाम कहते हैं।

अन्तका भाग पूर्व दिशाकी ओर रहे। तथा पूर्व व पश्चिमदिशामें रक्खे हुए दर्भोंका अन्त उत्तर-की ओर रहे। इसी प्रकार कुण्डके चारों ओर उदम्बरकी समिधा भी रक्खे।

ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्निकुमार देव आगच्छागच्छ।

यह मन्त्र पढ़कर होमकुण्डमें अग्निकुमार-को आह्वान कर प्रज्वलितकर उसकी शिखाकी गार्हपत्य संज्ञा रखकर उस अग्निमें अरिहंतकी दिव्य मूर्त्तिका संकल्प कर अथवा श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनका संकल्प कर अग्निकी पूजा करे।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्ण स्वायुधवाहनवधूचिन्हसपरिवाराः पञ्चदशतिथि-देवताः आगच्छत आगच्छत इदं अर्घ्यं गृह्णीत गृह्णीत स्वाहा (इति कुण्डस्य प्रथममेखलायां तिथिदेवतार्चनम्।)

यह मन्त्र पढ़कर कुण्डकी प्रथम मेखलापर १५ तिथि देवताओंको आह्वान कर उनकी

पूजन करे अर्थात् उनको एक अर्घ्य देवे। सबसे नीचेकी मेखला प्रथम मेखला कही जाती है।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्ण-स्वायुधवाहनवधूचिन्हसपरिवारा नवग्रहदेवता आगच्छत आगच्छत एतदर्घ्यं गृह्णीत गृह्णीत स्वाहा (इति द्वितीयमेखलायां ग्रहदेवार्चनम्)

यह मन्त्र पढ़कर द्वितीय मेखलापर ग्रह-देवताओंका आह्वान और पूजन करना चाहिये।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्ण-स्वायुधवाहनवधूचिन्हसपरिवाराः चतुर्णिकाये-न्द्रदेवता आगच्छत आगच्छत एतदर्घ्यं गृह्णीत गृह्णीत स्वाहा (इति अर्द्धमेखलायां इन्द्रार्च-नम्।)

यह मन्त्र पढ़कर ऊपरकी मेखलापर बत्तीस इन्द्रोंका आह्वान और पूजन करना चाहिये।

ओं ह्रीं क्रौं सुवर्णवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्ण-स्वायुधवाहनवधूचिन्हसपरिवार इन्द्रदेव आग-

च्छागच्छ इदं अर्घ्यं गृहाण गृहाण स्वाहा। (इति लघुपीठे दशदिक्पाल पूजा)

यह मन्त्र पढ़कर छोटी वेदीपर दश दिक्-पालका आह्वान और पूजन करे। मन्त्रमें इन्द्रदेव लिखा है सो दश दिक्पालोंका इन्द्र समझना चाहिये।

ओं ह्रीं स्थालीपाकमुपहरामि स्वाहा (पुष्पाक्षतैरुपहार्यं स्थालीपाकग्रहणम्)

यह मन्त्र पढ़कर स्थालीपाकको फूल और अक्षतोंसे भरकर अपने पास रक्खे।

ओं ह्रीं होमद्रव्यमादधामि स्वाहा (होमद्र-व्याधानम्) यह मन्त्र पढ़कर होम करनेके सब द्रव्य अपने पास रक्खे। ओं ह्रीं आज्यपात्रमुप-स्थापयामि स्वाहा (आज्यपात्रस्थापनम्)

यह मन्त्र पढ़कर घीका पात्र अपने पास रक्खे।

ओं ह्रीं स्रुचमुपस्करोमि स्वाहा स्रुचस्ता-पनं मार्जनं जलसेचनम् पुनस्तापनमग्रे निधाप-

नं च। यह मंत्र पढ़कर स्रुचाका संस्कार करे अर्थात् प्रथम ही उसे अग्निमें तपाकर धोकर जलसिंचन कर फिर तपावे और फिर अपने पास रक्खे।

ओं ह्रीं स्रुवमुपस्करोमि स्वाहा (स्रुवस्थापनं तथा)

यह मन्त्र पढ़कर स्रुचाके समान स्रुवाका भी संस्कार कर उसे अपने समीप रक्खे।

ओं ह्रीं आज्यमुद्वासयामि स्वाहा (दर्भपिण्डोज्वलेन आज्यस्योद्वासनमुत्पाचनमवेक्षणं च)

यह मन्त्र पढ़कर दर्भपूलसे घीका उद्वासन करे और फिर उसे तपाकर देखे।

ओं ह्रीं पवित्रतरजलेन द्रव्यशुद्धिं करोमि स्वाहा (होमद्रव्यप्रोक्षणम्)

यह मन्त्र पढ़कर होमकी सब द्रव्यको पवित्र जलसे छींटे देकर शुद्ध करे।

ओं ह्रीं कुशमाददामि स्वाहा (दर्भपूलमादाय सर्वद्रव्यस्पर्शनम्)

यह मंत्र पढ़कर दर्भ पूलसे सब होम द्रव्य-का स्पर्श करे।

ओं ह्रीं परमपवित्राय स्वाहा (अनामिका-ङ्गुल्यां पवित्रधारणम्)

यह मन्त्र पढ़कर दायें हाथकी अनामिका उंगलीमें पवित्री पहने अर्थात् दाभकी एक मुंदरी सी बनाकर पहने।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्राय स्वाहा। (यज्ञोपवीतधारणम्)

यह मन्त्र पढ़कर यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहने।

ओं ह्रीं अग्निकुमाराय परिषेचनं करोमि स्वाहा (अग्निपर्युक्षणम्)

यह मन्त्र पढ़कर अग्निकुण्डके चारों ओर थोड़ा थोड़ा पानी छिड़के।

अब नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर घीकी आहुति स्रुवासे देवे। ये छह मन्त्र हैं सो इनसे एकवार छह आहुति देकर फिर दूवारा तिवारा इस

प्रकार १८ वार आहुति देवे। सब १०८ आहुति हो जायगी।

ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धकेवलिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं पञ्चदशतिथिदेवेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं नवग्रहदेवेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं द्वात्रिंशदिन्द्रेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं दशलोकपालेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अग्नीन्द्राय स्वाहा (षडेतान् मन्त्रानष्टादशकृत्वः पुनरावर्त्तनेनोच्चारयन् स्रुवेण प्रत्येकमाज्याहुतिं कुर्यादित्याज्याहुतयः)

फिर नीचे लिखे पांच मन्त्रोंको पढ़कर तर्पण करे।

ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा। ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा। ओं ह्रीं आचार्यपरमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा। ओं ह्रीं उपाध्यायपरमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा। ओं ह्रः सर्वसाधुपरमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा (अनान्तरे पंच तर्पणानि)

ओं ह्रीं अग्निं परिषेचयामि स्वाहा (चीरे-

णाग्निपर्युक्षणम्)

यह मन्त्र पढ़कर कुण्डमें चारो ओर दूधकी धार देनी चाहिये। धार पतली और थोड़े दूधकी होनी चाहिये जिससे अग्नि न बुझने पावे। इसको पर्युक्षण कहते हैं

फिर नीचे लिखे मन्त्रसे १०८ वार समिधाकी आहुति देवे। समिधा हाथसे ही डालनी चाहिये। समिधाकी १०८ छोटी २ लकड़ी रख लेवे। मन्त्रको एक एक वार पढ़कर एक एक लकड़ी डालता जाय। मन्त्र यह है—

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं अ सि आ उ सा स्वाहा।

समिधाहुति देनेके वाद "ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धकेवलिभ्यः स्वाहा" इत्यादि छह मन्त्रोंसे घीकी छह आहुति देवे और फिर 'ओं ह्रां अर्हत्परमेष्ठिनस्तर्पयामि स्वाहा' इत्यादि पांचो मन्त्रोंसे तर्पण कर दूधकी धारा देकर पर्युक्षण करे पर्युक्षण करते समय वही मन्त्र पढ़े।

इसके अनन्तर नीचे लिखे मन्त्रोंसे लवं-

गादिकी आहुति देवे। लवंग, गंध, अक्षत, गुग्गुल, तिल, शालि, चावलोंका भात, केशर, कपूर, लाजा (खीलें) अगुरु और मिश्री इन-सबको मिलाकर एक जगह रख लेवे औरस्नु चासे आहुति देता जाय। मन्त्र २७ हैं सो चार वार पढ़कर १०८ आहुति देवे। मन्त्र ये हैं=

ओं ह्रीं अर्हद्भ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सिद्धेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सूरिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रौं पाठकेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रः सर्वसाधुभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनधर्मेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनागमेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनालयेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय स्वाहा। ओं ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय स्वाहा। ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा। ओं ह्रीं जयाद्यष्टदेवताभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं शोडषविद्यादेवताभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं चतुर्विंशतियक्षेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं चतुर्विंशतियक्षीभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं चतुर्दशभवनवासिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अष्टविधव्यन्तरेभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं चतुर्विधज्योतिरिन्द्रेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं द्वादशविधकल्पवासिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अष्टविधकल्पवासिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं दश-दिक्पालकेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं नवग्रहेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अष्टविधकल्पवासिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं अग्नीन्द्राय स्वाहा। ओं स्वाहा। भूः स्वाहा। भुवः स्वाहा। स्वः स्वाहा। (एतान् सप्तविंशतिमन्त्राश्चतुर्वारानुच्चार्य प्रत्येकं लवंगगंधाक्षतगुग्गुलतिलशालिकुंकुमकर्पूरलाजागुरुशर्कराभिराहुतीः स्रुचा जुहुयात्)

इन मन्त्रोंसे लवंगादिककी आहुति देकर 'ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धकेवलिभ्यः स्वाहा' इत्यादि छह मन्त्रोंसे छह घीकी आहुति देवे। फिर 'ओं ह्रां अर्हत्परमेष्ठिनस्तर्पयामि' इत्यादि पांच मन्त्रोंसे तर्पण करे। और 'ओं ह्रीं अग्निं परिषेचयामि स्वाहा' इस मन्त्रसे अग्निमें दूधकी धार देकर पहलेके समान पर्युक्षण करे।

आगे २६ पीठिकामन्त्र हैं सो प्रत्येक म-

न्त्रका तीन २ चार पढ़कर शालिचावलका भात, दूध, घी, और भी भक्ष्य पदार्थ खीर, मावा, मिश्री, केला इन सब पदार्थोंको मिलाकर स्रुचासे आहुति देता जाय। सब आहुति १०१ हो जायंगी। पीठिकामन्त्र ये हैं—

ओं सत्यजाताय नमः। ओं अर्हज्जाताय नमः। ओं परमजाताय नमः। ओं अनुपम-जाताय नमः। ओं स्वप्रधानाय नमः। ओं अ-चलाय नमः। ओं अक्षयाय नमः। ओं अव्या-बाधाय नमः। ओं अनन्तज्ञानाय नमः। ओं अनन्तदर्शनाय नमः। ओं अनन्तवीर्याय नमः। ओं अनन्तसुखाय नमः। ओं नीरजसे नमः। ओं निर्मलाय नमः। ओं अच्छेद्याय नमः। ओं अभेद्याय नमः। ओं अजराय नमः। ओं अपराय नमः। ओं अप्रमेयाय नमः। ओं अगर्भवासाय नमः। ओं अक्षोभ्याय नमः। ओं अविलीनाय नमः। ओं परमघनाय नमः। ओं परमकाष्ठयोगरूपाय नमः। ओं लोकाग्र

निवासिने नमः। ओं परमसिद्धेभ्यो नमः। ओं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमः। ओं केवलिसिद्धेभ्यो नमः। ओं अन्तकृत्सिद्धेभ्यो नमः। ओं परंपरसिद्धेभ्यो नमः। ओं अनादिपरमसिद्धेभ्यो नमः। ओं अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमः। ओं सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्य निर्वाणपूजार्ह अग्नीन्द्राय स्वाहा। सेवाफलं षट्परम स्थानं भवतु। अपमृत्युनाशनं भवतु।

ये १०८ आहुति देनेके बाद "ओं ह्रीं अर्हं इत्यादि छह मन्त्रोंसे घीकी छह आहुति देवे। "ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिनस्तर्पयामि इत्यादि पांच मन्त्रोंसे तर्पण करे। और फिर 'ओं ह्रीं अग्निं परिषेचयामि स्वाहा' इस मन्त्रसे कुण्डमें दूधकी धार देकर पर्युक्षण करे।

इसके बाद पूर्णाहुति देवे। पूर्णाहुतिके मन्त्र प्रारम्भसे अन्त पर्यन्त जबतक पूर्ण न हो तबतक अग्निमें बराबर घी की धार छोड़नी चाहिये और अन्तमें अर्थात् पूर्णाहुतिमें अष्ट-

द्रव्य पूजनकी सामग्री और नारियर अथवा और कोई फल होना चाहिये। पूर्णाहुतिके मन्त्र ये हैं।

ओं तिथिदेवाः पञ्च दशधा प्रसीदन्तु। नवग्रहदेवाः प्रत्यवायहरा भवन्तु। भावनादयो द्वात्रिंशद्देवा इन्द्रा प्रमोदन्तु। इन्द्रादयो विश्वे दिक्पालाः पालयन्तु। अग्नीन्द्रमौल्युक्तवाप्यग्निदेवताः प्रसन्ना भवन्तु। शेषाः सर्वेपि देवा एते राजानं विराजयन्तु। दातारं तर्पयन्तु। सङ्घं श्लाघयन्तु। वृष्टिं वर्षयन्तु। विघ्नं विघातयन्तु। मारीं निवारयन्तु। ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते पूर्णज्वलितज्ञानाय सम्पूर्णफलार्घ्यां पूर्णाहुतिं विदध्महे। (इति पूर्णाहुतिः)

पूर्णाहुति देनेके बाद हाथ जोड़कर "ओं दर्पणोद्योत ज्ञानप्रज्वलितसर्वलोकप्रकाशक भगवन्नर्हन् श्रद्धां मेधां प्रज्ञां बुद्धिं श्रियं बलं आयुष्यं तेजः आरोग्यं सर्वशान्तिं विधेहि स्वाहा।" यह मन्त्र पढ़कर भगवानसे प्रार्थना करे। फिर शा-

न्तिधारा देकर भगवानके चरणारविन्दमें पुष्पां-
जलि चढ़ाकर चतुर्विंशति तीर्थंकरोंका स्तवन कर पंचाग नमस्कार करे। तथा उस अग्नि कुण्डमेंसे उत्तम भस्म लेकर होम करनेवाला आचार्य स्वयं अपने ललाटसे लगावे। और दूसरे लोगोंको भी लगानेको देवे।

इस प्रकार होम पूरा कर होमकी वेदी पर विराजमान जिन प्रतिमा और सिद्ध यन्त्रको उनके पहले स्थानपर विराजमान कर वार २ नमस्कार कर व्रत ग्रहण कर देवोंको विसर्जन करे।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णाः सर्वलक्षणसम्पूर्णाः स्वायुधवाहनसमेताः क्षेत्रपालाः श्रियो-गन्धर्वाः किन्नराः प्रेता भूताः सर्वे ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा इमं साघ्यं चरुममृतमिव स्वस्तिकं यज्ञभागं गृह्णीत गृह्णीत। (इति क्षेत्रपालादिद्वारपालानभ्यर्चयेत्।)

यह मन्त्र पढ़कर क्षेत्रपालादि द्वारपालोंकी पूजा करे।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णं सर्वलक्षणसम्पूर्णा यानायुधयुवतिजनसहिता वास्तुदेवाः सर्वेपि ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदमर्घ्यं चरुममृतमिव स्वस्तिकं यज्ञभागं गृह्णीत गृह्णीत।

यह मन्त्र पढ़कर वेदीपर वास्तुदेवका पूजन करे। ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्णयानायुधयुवतिजनसहितयक्षदेव इदं अर्घ्यं वलिं गृहाण गृहाण।

यह मन्त्र पढ़कर तिथि देवताका पूजन करे। प्रतिपदाके दिन यक्षदेव द्वितीयाको वैश्वानर तृतीयाको राक्षस चतुर्थीको निऋति पञ्चमीको पन्नग षष्ठीको असुर सप्तमीको सुकुमार अष्टमीको पितृदेव नवमीको विश्वमाली दशमीको चमर एकादशीको वैरोचन द्वादशीको महाविद्या त्रयोदशीको मारदेव चतुर्दशीको विश्वेश्वर और अमावास्या अथवा पूर्णिमाको पिण्डभुजका पूजन करना चाहिये। मन्त्रमें जहां यक्ष देव लिखा है वहां जिस तिथिको पूजन किया

हो उस तिथिके देवताका नाम देना चाहिये। जैसे द्वतीयाको वैश्वानरदेव तृतीयाको राक्षसदेव इत्यादि।

ओं ह्रीं क्रौं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्णया-नायुधयुवतिजनसहितादित्य इमं वलिं गृहाण गृहाण स्वाहा।

यह मन्त्र पढ़कर वारदेवताका पूजन करे। रविवारके दिन आदित्य, सोमवारको सोम, मंगलके दिन भौम, बुधके दिन बुध, वृहस्पतिके दिन गुरु, शुक्रके दिन, शुक्र और शनिवारके दिन शनिका पूजन करना चाहिये। जो दिन हो उस दिन उसीका पूजन करना चाहिये।

तदनन्तर घरमें स्त्रियोंको सत्यदेवता (अरिहन्त आदि पंच परमेष्ठी क्रिया देवता (छत्र चक्र अग्नि) कुलदेवता (चक्रेश्वरी पद्मावती आदि गृहदेवता (विश्वेश्वरी धरणेन्द्र, श्री देवी कुवेरकी पूजा करनी चाहिये।

षोड़श-संस्कार।

आधान क्रिया।

आधानं नाम गर्भादौ संस्कारो मन्त्रपूर्वकः।
पत्नीं ऋतुमतीं स्नातां पुरस्कृत्यार्हदिज्यया ॥
तत्रार्चनविधौ चक्रत्रयं छत्रत्रयान्वितम्।
जिनार्चामभितः स्थाप्य समं पुण्याग्निभिस्त्रिभिः॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ७०—७१

जब स्त्री विवाहके अनन्तर प्रथम ऋतुमती होती है तब आधान क्रिया की जाती है। इससे यह सिद्ध है और यही शास्त्रकी आज्ञा है कि ऋतुमती होनेके पहले ही कन्याका विवाह कर-देना चाहिये। प्रथम ऋतुमती स्त्री चौथे दिन जब स्नान कर शुद्ध हो जाय उस दिन यह सब विधि करनी चाहिये।

सबसे प्रथम ही श्री जिनेन्द्रदेव चक्रत्रय छत्रत्रय और गार्हपत्य आहवनीय दक्षिणाग्नि इन तीनों अग्नियोंकी पूजा करनेके लिये होम करना चाहिये।

होम करनेके लिये जो वेदी बनाई जायगी और तीन अथवा एक कुण्ड बनेगा, उस कुण्डके पूर्व दिशाकी ओर एक एक हाथ लम्बी एक एक हाथ चौड़ी दो वेदी और बनावे। उन दोनों वेदियोंके मध्यभागमें पंच वर्ण चूर्णसे अग्निमंडल लिखे और आठों दिशाओंमें कर्णिका सहित आठ २ कमल लिखे।

वेदी तैयार हो जानेपर वृद्ध सौभाग्यवती स्त्रियां स्नान की हुई स्त्री और उसके पतिको वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत कर घरसे वेदीके समीप लावें। आते समय स्नाता स्त्रीके दोनों हाथोंमें अथवा मस्तकपर पांच पल्लव (पत्ते) माला वस्त्र सूत्र और नारियरसे सुशोभित एक मंगल कलश रक्खें। जब वे सब स्त्रियां वेदीके समीप आ जायं तब आचार्य बैठनेकी दोनों वेदियोंके सामने अर्थात् बैठनेकी दोनों वेदी और कुण्डों-के बीचकी भूमिको मिट्टीसे लीपकर उसपर हल्दी और चावलोंसे स्वास्तिक (साथिया.)

बनाकर उसपर वह मंगल कलश रक्खे और स्त्री पुरुष दोनोंको बैठनेकी दोनों वेदियोंपर बिठा देवे। स्त्री दाईं वेदीपर बैठनी चाहिये।

अनन्तर होमक्रिया प्रारम्भ की जाय और यथा विधि समाप्त हो जानेपर आचार्य मंगल-कलशको हाथमें लेकर उस दंपतीके पुण्यक-ल्याण और अर्थ (धन) लाभका चिन्तवन करता हुआ पुण्याहवचनोंको पढ़कर उस कल-शमेंसे जल लेकर दम्पति पर सेचन करे। तथा आचार्य नीचे लिखे मन्त्रोंको पढ़कर उस दम्पतिपर पीले चावल बखेरता जाय। सज्जा-तिभागी भव, सद्गृहिभागी भव, मुनीन्द्रभागी भव, सुरेन्द्रभागी भव, परमराज्यभागी भव, आर्हन्त्यभागी भवं, परमनिर्वाणभागी भव।

अनन्तर दोनों स्त्री पुरुष अग्निकी तीन प्रदक्षिणा देकर अपने २ स्थानपर आ बैठें। सौभाग्यवती स्त्रियां उन दोनोंपर कुंकुम छिड़के, आरती करें। जल और अक्षत लेकर आशीर्वाद

देती हुई उन दोनोंके मस्तकपर फेंके, तथा वस्त्र ताम्बूल अलंकारादिक देकर उन दोनोंका सत्कार करें।

घरकी वृद्ध स्त्रियां उन दोनोंको "तुम्हारे सम्बन्धसे हमारा वंश वृद्धिंगत हो, ऐसे आशीर्वाद वचनोंसे सन्तुष्ट कर घर भेज देवें।

अनन्तर अपने जातीय स्त्री पुरुषोंको भोजन ताम्बूल वस्त्र आभूषणादिकसे सन्तुष्ट कर उनका सत्कार करें।

प्रीति।

गर्भाधानात्परं मासे तृतीये सम्प्रवर्त्तते।
प्रीतिर्नामक्रियाप्रीतैर्या तुष्टेया द्विजन्मभिः॥
तत्रापि पूर्ववन्मन्त्रपूर्वा पूजा जिनेशिनाम्।
द्वारितोरणविन्यासः पूर्णकुम्भौ च सम्मतौ॥
तादादि प्रत्यहं भेरी शब्दो घण्टास्वनान्वितः।
यथा विभवमेवैतैः प्रयोज्यो गृहमेधिभिः॥७६॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ७७ से ७९॥

दूसरी क्रियाका नाम प्रीति क्रिया है। यह गर्भाधानसे तीसरे महीनेमें की जाती है।

प्रथम ही गर्भिणी स्त्रीको तेल उवटनादि लगाकर स्नान कराकर वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत करे तथा शरीरपर चंदनादिक लगावे।

सौभाग्यवती वृद्ध स्त्रियां गर्भिणी स्त्रीके दोनों हाथोंमें पांच पल्लव माला वस्त्र सूत्र और नारियलसे सुशोभित एक मंगल कलशको रखकर बाजे-गाजेके साथ वेदी तक आवें। कुण्डोंके पूर्वदिशामें हल्दी और धुले चावलोंसे स्वस्तिक (साथिया) खींच कर उसपर उस मंगल कलशको रखदें। कुण्डोंके पूर्वदिशामें दो काठके पटा डालकर उन पर दम्पतीको बिठावें।

अनन्तर होम होना चाहिये। होमके बाद आचार्य मंगल कलशको हाथमें लेकर पुण्याहवचनोंको पढ़ता हुआ मंगलकलशमेंसे जल लेकर गर्भिणी स्त्रीपर सेचन करे अर्थात् छींटे दे और नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर उस दम्पतिपर

पीले चावल बखेरे। त्रैलोक्यनाथो भव,त्रैकाल्य-ज्ञानी भव, त्रिरत्नस्वामी भव, अनन्तर शांति भक्ति (शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं इत्यादि शांति-पाठ) पढ़कर देवोंको विसर्जन करे, इसी समय "ओं कं ठं व्हः पः अ सि आ उ सा गर्भार्भकं प्रमोदेन परिरक्षत स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर पति गन्धोदकसे अपनी गर्भिणी स्त्रीका उदर सेचन कर स्पर्श करे।

अनन्तर गर्भिणी स्त्री अपने हाथसे अपने पेटपर गन्धोदक लगावे। तथा बालकको रक्षा करनेके लिये कलिकुण्ड यन्त्र गलेमें बांधे। उस दिन सौभाग्यवती स्त्रियोंको भोजनादिकसे स-न्तुष्ट करना चाहिये। तथा यथा साध्य अपने जातीय भाइयोंका भी सत्कार करना चाहिये।

इस उत्सवमें अपने दरवाजेपर तोरण अ-वश्य लगाना चाहिये। बाजे बजवाने चाहिये। इस क्रियाका नाम प्रीति अथवा मोद वा प्रमोद क्रिया है इसलिये इसमें सब ऐसे कार्य किये

जाते हैं जिनसे उस गर्भिणी स्त्रीको तथा अन्य जातीयजनोंको प्रीति और प्रमोद बढ़े।

सुप्रीतिः।

आधानात्पञ्चमे मासि क्रिया सुप्रीतिरिष्यते।
या सम्प्रीतैः प्रयोक्तव्या परमोपासकव्रतैः॥
तत्राप्युक्तो विधिः पूर्वः सर्वोर्हद्बिंबसन्निधौ।
कार्यो मन्त्रविधानज्ञैः साक्षीकृत्याग्निदेवताः॥

आदिपुराण पर्व ३८ श्लोक ८०—८१॥

तीसरी क्रियाका नाम सुप्रीति अथवा पुंसवन क्रिया है। यह गर्भके पांचवें महीनेमें की जाती है। इसमें भी प्रीति क्रियाके समान सौभाग्यवती वृद्ध स्त्रियां उस गर्भिणी स्त्रीको स्नान कराकर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित कर चंदनादिक लगा हाथमें मंगलकलश दें, वेदीके समीप लावें, मंगकलशको पूर्वके समान ही स्वस्तिक पर रख कर कुण्डोंके पूर्व दिशामें रखते हुए काठके पाट पर लाल कपड़ा बिछाकर दम्पतिको बिठावें। इस

वार वस्त्रा भूषण पहनानेके समय सिन्दूर और अंजन (काजल) अवश्य लगाना चाहिये।

अनन्तर होम किया आरम्भ की जाय और यथाविधि समाप्त हो जानेपर आचार्य मंगल-कलशको हाथमें लेकर पुण्याहवाचन पाठको पढ़ता हुआ उस कलशेमेंसे जल लेकर दम्पतिपर सिंचन करे तथा नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर पीले चावल बखेरे। अवतारकल्याणभागी भव, मन्द-रेन्द्राभिषेककल्याणभागी भव, निष्क्रान्तकल्याण-भागी भव, आर्हन्त्यकल्याणभागी भव, परम-निर्वाणकल्याणभागी भव।

अनन्तर पति स्त्रीके हाथमें ताम्बूल (लगा-हुआ पान अथवा सुपारी और पान) देवे तथा जौके अंकूरे* पुष्प पत्ते और दाभसे बनी हुई एक माला तैयार रक्खे जो इस समय पति अपने हाथसे "ओं कं वं भ्वीं क्ष्वीं हं सः कान्तागले यवमालां क्षिपामि झ्रौं स्वाहा:" यह मन्त्र पढ़कर

* जौ बोनेसे पांचवें सातवें दिन जो अंकूरे होते हैं सो।

स्त्रीके गलेमें डाले।

नवीन मिट्टीके छोटे २ तीन कलश लेकर उनमें एकमें खीर दूसरेमें दही भात और तीसरेमें हल्दीका पानी भरकर रक्खे। कंठमें यवमाला १ डालनेके पश्चात् "ओं भं वं व्हः पः हः अ सि आ उ सा कान्तापुरतः पायसदध्योदनहरिद्राम्बुकलशान् स्थापयामि स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर स्त्रीके सामने तीनों कलश रक्खे। तथा एक बे समझ छोटी कन्यासे किसी एक कलशका स्पर्श करावें। जो वह कन्या खीरसे भरे कलशको स्पर्श करे तो समझना चाहिये कि पुत्र होगा। यदि दही भातके कलशको स्पर्श करे तो कन्या और जो हल्दीके पानीके कलशको स्पर्श करे तो दोनोंमेंसे कोई नहीं होगा अर्थात् या तो नपुंसक होगा या मृतक होगा या अल्पजीवी होगा ऐसा समझना चाहिये।*

अनन्तर आचार्य यक्षादिकोंको पूर्णार्घ्य देकर

* १ जौकी माला यह एक प्रकारका कन्द है।

शांतिपाठ पढ़े और उस घरका नायक आये हुए सज्जनोंको ताम्बूल वस्त्र फलादिक देकर आदर सत्कार और सन्तुष्ट करे।

दम्पतिको बाजे गाजेके साथ घर पहुंचा देवें तथा उस दिनसे उस घरमें प्रतिदिन गीत आनन्द होने चाहिये तथा दीन दुःखी लोगोंको प्रतिदिन दान देना चाहिये।

धृतिः।

धृतिस्तु सप्तमे मासि कार्या तद्वत्कृतादरैः।
गृहमेधिभिरव्यग्रमानसै गर्भवृद्धये ॥ ८२ ॥

आदि पुराण ३८

चौथी क्रियाका नाम धृति है। इसीको सीमन्तोन्नयन अथवा सीमन्तविधि कहते हैं। यह सातवें महीनेके शुभ दिन नक्षत्र वार योग आदिमें करना चाहिये।

इसमें भी सुप्रीति क्रियाके समान सौभाग्यवती वृद्ध स्त्रियां उस गर्भिणी स्त्रीको स्नान कराकर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित कर हाथमें

मंगल कलश दें वेदीके समीप लावें। मंगल कलशको पूर्वके समान स्वस्तिक पर रख कर कुण्डोंके पूर्व दिशामें दम्पतिको बिठावें।

अनन्तर होम करना प्रारम्भ किया जाय और यथाविधि समाप्त होजानेपर अपनी जातीय और अपने कुलकी वृद्ध पुत्रवाली सौभाग्यवती स्त्रियां गर्भिणीके केशोंमें तीन मांग करें।

फल सहित दो गुच्छे और तीन दाभकी एक गड्डी बनाकर इससे मांग करे। अथवा खैरकी लकड़ीकी सलाई बनाकर उसको घीमें डबोकर उससे मांग करे। अथवा शमीवृक्षकी समिधासे अथवा तीन जगह सफेद ऐसी सलाईसे मांग करे। जिस सलाईसे मांग की जाय उसे तेल और सिंदूरमें डबोकर मांग करना चाहिये।

अनन्तर पति अपने हाथसे उदम्बरके चूर्णसे "ओं ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं अ सि आ उ सा उदम्बरकृतचूर्णं समस्तजठरे चेयं भर्व्वीं द्वीं स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर स्त्रीके उदर और मस्तक पर

सेचन करे। तथा उदम्बरफलोंकी माला बनाकर "ओं नमोर्हते भगवते उदरम्बरफलाभरणेन बहु-पुत्रा भवितुमर्हा स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर आ-चार्य अपने हाथसे उस स्त्रीके गलेमें उदम्बर-फलोंकी माला डाले।

अनन्तर आचार्य मङ्गलकलशको हाथमें लेकर पुण्याहवाचन पाठको पढ़ता हुआ स्त्रीको सिंचन करे। तथा नीचे लिखे हुए मन्त्र पढ़कर उसपर पीले चावल बखेरे। "सज्जातिदातृभागी भव, सद्गृहिदातृभागी भव, मुनीन्द्रदातृभागी भव, सुरेन्द्रदातृभागी भव, परमराज्यदातृभागी भव, आर्हन्त्यदातृभागी भव, परमनिर्वाणदा-तृभागी भव और दम्पतिको यथास्थान पहुंचा देवें।

घरका नायक आगत सज्जनोंका ताम्बूल फलादिकसे सत्कार कर सबको विदा करे।

मोद क्रिया ।

नवमे मास्यतोऽभ्यर्णे मोदो नाम क्रियाविधिः ।
तद्वदेवाहतैः कार्यो गर्भपुष्ट्यै द्विजोत्तमैः ॥
तत्रेष्टो गात्रिकाबंधो मांगल्यं च पुसाधनं ।
रक्षासूत्रविधानं च गर्भिण्या द्विजसत्तमैः ॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ८३-८४

यह क्रिया आदि पुराणमें है, अन्य ग्रंथोंमें नहीं है, क्योंकि इस क्रियामें भी प्रायः प्रीति क्रियाके समान कार्य किया जाता है। अर्थात् मोद नाम प्रमोद—या हर्षका है। इसमें हर्ष-के ही कार्य किये जाते हैं। जैसे गर्भसे नौवें महीनेमें मोद नामको क्रिया विधि की जाती है यह क्रिया भी धार्मिक उत्तम द्विजों द्वारा पहिली क्रियाओंके सदृश गर्भकी पुष्टिके लिये करना चाहिये। इस क्रियामें द्विजोंको गर्भिणीके शरीरपर गात्रिकाबन्ध अर्थात् मंत्र पूर्वक बीजा-क्षर लिखना चाहिये। मंगलाचार करना चाहिये

गर्भिणीको आभूषण पहिनाना चाहिये और उसको रक्षाके लिये कंकण सूत्र बांधनेकी विधि करनी चाहिये।

जातकर्म्म।

प्रियोद्भवः प्रसूतायां जातकर्मविधिः स्मृतः।
जिनजातकमाध्याय प्रवर्त्यो यो यथाविधि॥
अवांतरविशेषोत्र क्रियामंत्रादिलक्षणः।
भूयान्समस्त्यसौ ज्ञेयो मूलोपासकसूत्रतः॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ८५-८६

पुत्र अथवा पुत्रीका जन्म होते ही पिताको उचित है कि वह श्रीजिनालयमें तथा अपने दरवाजेपर बाजे बजवावे। भिक्षुजनोंको दान दे। बन्धुवर्गोंको वस्त्र आभूषण और ताम्बूलादिक देवे। तथा "ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रौं ह्रूं ह्रः नानानुजानुप्रजो भव भव अ सि आ उ सा स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर पुत्रका मुख देखकर घी दूध और मिश्री मिलाकर सोनेकी चमची

अथवा सोनेके किसी वर्त्तनसे उसे पांच बार पिलावे। अनन्तर नाल काट कर किसी शुद्ध भूमिमें मोती और रत्नोंके* साथ गाड़दे।

प्रसूति स्थानसे चार अंगुल जमीन छोड़ कर मिट्टी और गोवरसे जमीन लिपवावे। उस पर पंचकल्क चूर्ण डालकर गर्म किये हुए जलसे पुत्र और माताको स्नान करावे। इसी प्रकार हर तीसरे दिन स्नान करावे।

वस्त्रादिकोंको धोवीसे धुलाकर तथा वर्त्त-नादिकोंको मांज कर शुद्ध करे।

पांचवें अथवा छठे दिन रात्रिके समय आठ दिक् पालोंका पूजन करे रात्रिको जागरण और दीपो-त्सव करे। शान्ति पाठ पढ़े और दान दे। दान पहले दिन भी दिया जाता है।

सूतक निवट जानेपर मिट्टीके वर्त्तनोंको फेंकदे। धातुके वर्त्तनोंको मंजवाकर शुद्ध करे।

---

* यदि मोती और रत्नोंकी सामर्थ्य न हो तो पीले चाव-लोंके साथ गाड़दे।

उसी दिन श्री जिनालयमें जाकर श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा करे। अन्न दान दें और होमशालामें जाकर होम करे।

अनन्तर गन्धोदकसे स्त्री और पुत्रका सिंचन करे तथा घरको भी सिंचन कर पवित्र करे और बन्धुवर्गोंको भोजन दे।

अथ सूतक विचार।

प्रसूतिका सूतक ब्राह्मणको दश दिन क्षत्रियको बारह और वैश्यको चौदह दिनका कहा है। जिस घरमें प्रसूति हुई है उसमें मुनिजन एक महीने तक भोजन नहीं करेंगे। और उसके कुटम्बियोंके घर दश दिन तक भोजन नहीं करेंगे।

यदि स्वामीके घर किसी दासी (नौकरानी) अथवा घोड़ीके प्रसूति हुई हो तो स्वामीको पांच दिनका सूतक मानना चाहिये। यदि ऊंटनी, गाय, भैंस, बकरीके प्रसूति हुई हो तो

एक दिनका सूतक कहा है। यदि इनका सूतक घरके बाहर हुआ हो तो फिर सूतक माना नहीं जाता।

ध्यान देने योग्य विशेष।

गर्भाधानं प्रमोदश्च सीमन्तः पुंसवं तथा।
नवमे मासि चैकत्र कुर्यात्सर्वं तु निर्धनः॥ १॥
अन्नप्राशनपर्यन्ता गर्भाधानादिकाः क्रियाः।
उक्तकाले भवन्त्येता दोषो नाषाढपुष्ययोः॥२॥
मासप्रयुक्तकार्येषु अस्तत्वं गुरुशुक्रयोः।
न दोषकृत्तदा मासो रक्षको पलवानिति॥ ३॥

गर्भाधान प्रमोद सीमन्त और पुंसवन इन संस्कारोंकी पृथक् पृथक् करनेकी सामर्थ्य न हो तो ये चारों संस्कार इकट्ठे नवमें महीनेमें हो सकते हैं। गर्भाधानादि अन्नप्राशन-पर्यन्त सम्पूर्ण संस्कार नियत समयपर ही होते हैं इसलिये अषाढ़ और पौष महीनेमें करनेमें भी कोई दोष नहीं है। इन संस्कारोंमें बृहस्पति

और शुक्रका अस्त होना भी बुरा नहीं माना जाता। अर्थात् ये मास प्रयुक्त संस्कार वृहस्पति और शुक्रके अस्त होते हुये तथा आषाढ़ और पौष महीनेमें भी हो सकते हैं।

नामकर्म।

द्वादशाहात्परं नामकर्मजन्मादिनान्मतम्।
अनुकूले सुतस्यास्य पित्रोरपि सुखावहे॥
यथाविभवमत्रेष्टं देवर्षिद्विजपूजनम्।
शस्तं च नामधेयं तत् स्थाप्यमन्वयवृद्धिकृत्॥
अष्टोत्तरसहस्राद्वा जिननामकदम्बकात्।
घटपत्रविधानेन ग्राह्यमन्यतमं शुभम्॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ८८से ८९ तक

सातवां संस्कार नामकर्म है। पुत्रोत्पत्तिके बारहवें दिन अथवा सोलहवें, बीसवें अथवा बत्तीसवें दिन नामकर्म करना चाहिये। कदाचित् बत्तीसवें दिन तक भी नामकर्म न हो सका तो जन्मदिनसे वर्ष पर्यंत चाहे जब नामकर्म कर सकते हैं।

पूर्व संस्कारोंके समान होमके लिये वेदी आदि बनाकर कुण्डोंके पूर्व दिशामें काष्ठासन पर पुत्र सहित दम्पतिको वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित कर बिठावे। पुत्र स्त्रीके गोदमें रहे और वह स्त्री पतिके दाईं ओर बैठे। मङ्गलकलश भी कुंडोंके पूर्वदिशामें दम्पतिके सम्मुख रक्खे।

प्रथम ही होम किया जाय और यथाविधि समाप्त हो जानेपर जिनालय तथा अपने घरमें बाजे बजवावे और आचार्य मंगलकलशको हाथमें लेकर पुण्याहवचन पाठको पढ़ता हुआ दंपति और पुत्रको सिंचन करे।

अनन्तर पिता एक थालीमें चांवल फैला कर (बिछाकर) उसमें प्रथम ही अपना नाम और फिर जो पुत्रका नाम रखना हो सो लिखे। तथा एक दूसरी थालीमें घी और दूध मिलाकर उसमें उस बच्चेके पहनाने योग्य आभूषण डाल दे। दोनों ही थालियोंमें गंध पुष्प और दाभ डाल दे। मिले हुए घी और दूधको दाभसे

लेकर उस बच्चेके मस्तक कान कंठ भुजा और छातोमें सिंचन कर आभूषण पहनावे। अनन्तर श्रीजिनेन्द्रदेवसे प्रार्थना करे कि "एक हजार आठ नामोंसे सुशोभित श्रीदेवाधिदेव इस कुमारका शुभ नाम दीजिये" इस प्रकार आगत मंडलीके साथ तीन बार प्रार्थना कर " ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं बालकस्य नामकरणं करोमि नाम्ना आयुरारोग्यैश्वर्यवान् भव भव अष्टोत्तर-सहस्राभिधानार्हो भव भव क्ष्रौं क्ष्रौं अ सि आ उ सा स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर पुत्रका नाम उच्चस्वरसे उच्चारणकर भगवानको नमस्कार करे। अनन्तर आचार्य स्वयं नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर उस पुत्रपर पीले चांवल बखेरे। दिव्या-ष्टसहस्रनामभागी भव, विजयनामसहस्रभागी भव, परमनामाष्ट सहस्रभागी भव। अनन्तर यक्षदेवको पूर्णार्घ्य देकर देवोंको विसर्जन करे। तथा आगत मंडलीको ताम्बूल वस्त्रादिकसे सत्कार कर विदा करे।

नाम रखनेकी एक विधि ऊपर लिखी जा चुकी है दूसरी विधि यह है कि भगवानके एक हजार आठ नामोंको एक हजार आठ कागजके टुकड़ोंपर लिखकर उन कागजोंकी गोली बना लेवे और एक घड़ेमें भर देवे। एक कागजपर 'नाम' ऐसा शब्द लिखकर गोली बना लेवे। एक हजार सात कोरे कागजके टुकड़ोंकी गोली बना लेवे। नाम शब्दकी लिखी हुई गोली और कोरे कागजोंकी गोलियां एक दूसरे घड़ेमें भर देवें। इन दोनों गोलियों-से भरे हुए घड़ोंमेंसे एक बेसमझ बालकसे एक एक गोली निकलवाता जाय अर्थात् एक गोली भगवानके लिखे हुए नामोंमेंसे और एक गोली कोरे कागजोंकी गोलियोंमेंसे इस प्रकार दोनों गोलियां साथ साथ निकलवाता जाय। जो कोरे कागजोंकी गोलियोंके साथ साथ भगवान-के नामकी गोलियां आतीं जायं उन्हें अलग रखता जाय। 'नाम' जो नाम शब्द लिखी

गोलीके साथ जिनेन्द्रके नामकी गोली आवे उसमें जो नाम निकले वही नाम उस पुत्रका रखना चाहिये। नाम रखते समय वही ऊपर लिखा मन्त्र पढ़ना चाहिये।

इसी दिन सन्ध्यासमय कर्णवेध (कर्णछेदन) किया जाता है जो पुत्र हो तो "ओं ह्रीं श्रीं अर्हं बालकस्य ह्रः कर्णवेधनं करोमि अ सि आ उ सा स्वाहा:" यह मन्त्र पढ़कर कर्णछेदन करना चाहिये और जो पुत्री हो तो ओं ह्रीं श्रीं अर्हं बालकस्य ह्रः कर्णनासावेधनं करोमि अ सि आ उ सा स्वाहा ', यह मन्त्र पढ़कर कर्ण नासिका छेदन करना उचित है।

कर्णछेदन करनेके पश्चात् थोड़ा विश्राम लेकर बच्चेको प्रथम पालना झुलाना चाहिये। अर्थात् इसी दिन रात्रिको बच्चेके पालना झुलानेका मुहूर्त्त किया जाता है। एक सुन्दर पालना बनाकर "ओं ह्रीं क्ष्रौं क्ष्रौं क्ष्वीं क्ष्वीं आन्दोलं बालकमारोपयामि तस्य सर्वरक्षा भवतु क्ष्रौं क्ष्रौं

स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर बच्चे को पालनामें बिठा या सुला कर झुलाना चाहिये।

वहिर्यान।

वहिर्यानं ततो द्वित्रैर्मासैस्त्रिचतुरैस्त ।
यथानुकूलमिष्टेहि कार्यं तूर्यादिमङ्गलैः॥
ततः प्रभृत्यमीष्टं हि शिशोः प्रसववेश्मनः ।
वहिः प्रणायनं मात्रा धात्र्युत्सङ्गगतस्य वा ॥
तत्र बन्धुजनादर्थलाभो यः पारितोषकः ।
स तस्योत्तरकालेप्यों धनं पित्र्यं यदाप्स्यति ॥

आदि पुराण पर्व-३८ श्लोक ९० से ९२ तक

आठवें संस्कारका नाम वहिर्यान है। वहिर्यानका अर्थ बाहर निकलना है। यह संस्कार दूसरे तीसरे अथवा चौथे महीनेमें करना चाहिये। बाहर निकलनेका अभिप्राय बच्चेको श्रीजिनेन्द्रदेवका प्रथम दर्शन कराना है। अर्थात् जन्मसे दूसरे तीसरे अथवा चौथे महीनेमें बच्चेको घरसे बाहर निकालकर प्रथम ही किसी चैत्यालय अथवा जिनालयमें लेजाकर श्रीजिनेन्द्रदेवके

दर्शन कराना चाहिये। यह क्रिया शुक्लपक्ष और शुभ नक्षत्रमें ही की जाती है।

प्रथम ही बालकको स्नान कराकर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित करे तथा आचार्य पुण्याहवचन पाठ पढ़ता हुआ पवित्र जलसे उसे सिंचन करे। माता पिता अथवा धाय इन तीनोंमेंसे कोई भी बालकको गोदीमें लेकर बाजे गाजे और भाई बिरादरीके साथ घरसे बाहर निकलें जिनालयमें जाकर श्रीजिनेन्द्रदेवकी तीन प्रदक्षिणा देवें, पूजा करें, नमस्कार करें और फिर बालककी वृद्धि होनेकी कामनासे "ओं नमोर्हते भगवते जिनभास्कराय तव मुखं बालकं दर्शयामि दीर्घायुष्यं कुरु कुरु स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर बालकको श्रीजिनेन्द्रदेवका दर्शन करावें। दर्शन कराकर फिर उसीप्रकार घर आवें।

घर आकर संघको यथायोग्य वस्त्रादिकसे तथा शेष आगत मंडलीको ताम्बूल चन्दनादिकसे आदर सत्कार कर विदा करे।

निषद्या।

ततः परं निषद्यास्य क्रिया बालस्य कल्प्यते।
तद्योग्ये तल्प आस्तीर्णे कृतमङ्गलसन्निधौ॥
सिद्धार्चनादिकः सर्वो विधिः पूर्ववदत्र च।
यतो दिव्यासनार्हत्वमस्य स्यादुत्तरोत्तरम्॥

आदिपुराण—३८ श्लोक ९३-९४

जन्मसे पांचवें महीनेमें निषद्या वा उपवेशन विधि करना चाहिये। निषद्या वा उपवेशनका अर्थ है विठाना अर्थात् पांचवें महीनेमें बालकको बिठाना चाहिये।

प्रथम ही श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजन होमकर भूमिका पूजन कर पंच कुमारोंका पूजन करे।

नेमिनाथ पार्श्वनाथ और वर्द्धमान आदि इन बालब्रह्मचारी तीर्थकरोंकी कुमार संज्ञा है।

अनन्तर चावल गेंहूं उरद मूंग तिल जौ इनसे रंगावली बनाकर उसपर एक वस्त्र बिछा देवे।

तथा बालकको स्नान कराकर वस्त्रालंकार-विभूषित कर "ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा बालकमुपवेशयामि स्वाहा"। यह मन्त्र पढ़ कर उस रंगावलीपर बिछे हुये वस्त्रपर उस बालकको पूर्व दिशाकी ओर मुख कर पद्मासन बिठाना चाहिये। अर्थात् बालका बायां पैर नीचे, दायां पैर ऊपर और दोनों हाथ पैरोंपर रहें।

अनन्तर बालकको आरती उतारकर सज्जन जन उसे आशीर्वाद देवें।

अन्नप्राशन।

गते मासपृथक्त्वे च जन्मादस्य यथाक्रमम्।
अन्नप्राशनमाम्नातं पूजाविधिपुरस्सरम् ॥९५॥

आदिपुराण पर्व-३८

इस संस्कारका नाम अन्नप्राशन विधि है। अन्नप्राशनका अर्थ है बालकको अन्न खिलाना। अर्थात् बालकको अन्न खाना सिखलानेके लिये तथा उस अन्न द्वारा बालककी वृद्धि होनेके लिये

यह संस्कार किया जाता है। यह संस्कार सातवें महीनेमें करना चाहिये। यदि सातवेंमें न हो सके तो आठवें अथवा नवमें महीनेमें करलेना उचित है।

प्रथम ही शुभ दिन शुभ नक्षत्रमें श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा और होम करे। उस दिन घरमें शुद्ध अन्न तैयार करावे। बालकका पिता अथवा माता पूर्वदिशाकी ओर मुख कर बैठे और बालकको बांई ओरकी गोदमें इस प्रकार विठालेवे कि जिसमें बालकका मुख दक्षिण दिशाकी ओर हो जाय। एक कटोरीमें दूध भात मिश्री और घी मिलाकर रखलेवे तथा दूसरी कटोरीमें दही भात रखलेवे।

प्रथम ही "ओं नमोर्हते भगवते भुक्तिशक्तिप्रदायकाय बालकं भोजयामि पुष्टिस्तुष्टिआरोग्यं भवतु भवतु झ्वीं क्ष्वीं स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर दूध भात घी मिश्री मिले हुये कटोरेमेंसे थोड़ासा लेकर बालकके मुखमें दे देवे।

फिर पीछेसे दही भातका ग्रास भी दे देवें।

अनन्तर "दिव्यामृतभागी भव, विजयामृतभागी भव।" इन दो मन्त्रोंको पढ़कर आचार्य स्वयं उस बालकके मस्तकपर पीले चावल बखेरे। उस दिन बालकका पिता अपने बंधुवर्गोंको अपने यहां ही भोजन करावे।

पादन्यास अथवा गमन विधि।

इस गमन विधिका उल्लेख आदिपुराणमें नहीं है। परन्तु त्रिवर्णाचारादि संस्कार ग्रन्थोंमें इस संस्कारकी पूर्ण विधि पाई जाती है। अतएव इस विधिका लिखना भी परमावश्यक है।

यह संस्कार नवमें महीनेमें किया जाता है। जिस दिन गमन करने योग्य नक्षत्र वार और योग हो उसी दिन यह संस्कार करना चाहियें।

प्रथम ही बालकका पिता पहलेके समान श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा तथा होम करे। बालकको

वस्त्रालंकारोंसे विभूषित करे। उस मंडपमें किनारे २ चारों ओर एक धुला हुआ वस्त्र इस प्रकार बिछावे कि जिसमें वेदी तथा श्रावकादि सज्जनजनोंके बैठनेका स्थान बीचमें आ जाय अर्थात् वेदी और सज्जनोंके बैठनेका स्थानके चारों ओर परिक्रमारूपसे वह वस्त्र बिछावे। यह वस्त्र पूर्व दिशाकी ओरसे बिछाना प्रारम्भ करे और दक्षिण उत्तर पश्चिमकी ओर होता हुआ पूर्वदिशामें ही समाप्त करे।

अनन्तर पिता उस बालकके दोनों हाथ पकड़ अग्निकुण्डकी पूर्व दिशामें उत्तर दिशाकी ओर मुख कराकर उस बालकको उस बिछे हुये वस्त्रपर खड़ा करे तथा " ओं नमोर्हते भगवते श्रीमते महावीराय चतुस्त्रिंशदतिशय-युक्ताय युक्ताय बालकस्य पादन्यासं शिक्षयामि तस्य सौख्यं भवतु भवतु भवीं क्ष्वीं स्वाहा ' यह मन्त्र पढ़कर उस बालकका दायां पैर आगे बढ़ावे। फिर इसी प्रकार उस बालकके दोनों

हाथ पकड़े हुये उसी वस्त्रपर उसे चलाता जाय। पूर्व दिशा समाप्त होनेपर दक्षिणकी ओर मुड़-जाय। दक्षिणसे पश्चिम उत्तरको ओर होता हुआ फिर पूर्वकी ओर आ जाय।

इसी प्रकार तीन प्रदक्षिणा करा देवे। ध्यान रहे कि प्रदक्षिणा देते समय अग्निकुण्ड बालकके दायें हाथकी ओर रहेगा।

प्रदक्षिणा दे चुकनेपर बालकसे श्रीजिनेन्द्रदेवको नमस्कार करावे। तथा अग्निगुरु और वृद्धजनोंको भी नमस्कार करावे।

व्युष्टिः।

ततोस्य हायने पूर्णे व्युष्टिर्नाम क्रिया मता।
वर्षवर्द्धनपर्यायशब्दवाच्या यथाश्रुतम्॥
अत्रापि पूर्ववद्दानं जैनीपूजा च पूर्ववत्।
इष्टबन्धुसमाह्वानसम्मानादिश्च लक्ष्यताम्॥
आदिपुराण पर्व ३८ श्लोक ९६-९७॥

इस संस्कारका नाम व्युष्टि है। इसका

अर्थ वर्ष वृद्धि है। जिसदिन बालकका वर्ष पूरा हो उस दिन यह संस्कार करना चाहिये।

इस संस्कारमें कोई विशेष क्रिया नहीं है। केवल जन्मोत्सव मनाना है। सो पूर्वके समान श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा और होम करे। तथा नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर उस बालकपर पीले चावल बखेरे। "उपनयनजन्मवर्षवर्द्धनभागी भव, वैवाहनिष्टवर्षवर्द्धनभागी भव, मुनीन्द्रवर्षवर्द्धनभागी भव सुरेन्द्रवर्षवर्द्धनभागी भव, मन्दराभिषेकवर्षवर्द्धनभागी भव, यौवराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव, महाराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव, परमराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव, आर्हन्त्यराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव।"

अनन्तर दान दे और इष्टजन तथा बन्धुवर्गोंको भोजनादि द्वारा सन्तुष्टकर उनका यथेष्ट सत्कार करे।

केशवाय अथवा चौलकर्म ।

केशवायस्तु केशानां शुभेऽह्नि व्यपरोपणम् ।
चौरेण कर्मणा देवगुरुपूजापुरस्सरम् ॥
गन्धोदकार्द्रितान् कृत्वा केशान् शेषाक्षतोचितान् ।
मौण्ड्यमस्य विधेयं स्यात्सचूलं चान्वयोचितम् ॥
स्नपनोदकधौताङ्गमनुलिप्तं सभूषणम् ।
प्रणमय्य मुनीन्पश्चाद्योजयेद्बन्धुताशिषा ॥
चौलाख्यया प्रतीतेयं कृतपुण्याहमङ्गला ।
क्रियास्यामादृतो लोको यतते परया मुदा ॥

आदिपुराण पर्व ३८ श्लोक ९८ से १०१ तक ।

संस्कार चौलकर्म है । यह संस्कार पहले, तीसरे, पांचवें अथवा सातवें वर्षमें करना उचित है । परन्तु यदि बालककी माता गर्भवती हो तो मुंडन करना सर्वथा अनुचित है । माताके गर्भवती हुये यदि मुंडन किया जायगा तो गर्भपर अथवा उस बालकपर कोई विपत्ति हो जाना संभव है । यदि बालकके पांच वर्ष पूर्ण हो गये

हों तो फिर माताका गर्भ किसी प्रकारका दोष नहीं कर सकता। अर्थात् सातवें वर्ष यदि माता गर्भवती भी हो तथापि बालकका मुंडन कर देना ही उचित है। बालकके सातवें वर्षमें माताके गर्भसे कोई हानि नहीं हो सकती और न उस गर्भको ही कोई हानि हो सकती है।

जिस बालकका मुंण्डन करना है यदि उसके आधानादिक पिछले संस्कार न हुये हों तो प्रथम व्याहृति मन्त्रोंसे घीकी आहुति देकर प्रायश्चित्त कर लेवे अनन्तर मुण्डनकर्म प्रारम्भ करे।

शुभ दिन तथा शुभ नक्षत्रमें यह विधि होनी चाहिये। प्रथम ही बालकको सुगन्ध-जलसे स्नान कराकर वस्त्रालंकारोंसे विभूषित करे। अनन्तर पूर्वके समान श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा तथा होम करे। बालकके शरीरसे गंध लगाकर पुण्याहवाचनमन्त्रसे उसे सिंचन करे।

मिट्टीके छह संस्कारोंमें क्रमसे जौ, उड़द तिल, चावल शमीके पत्ते और गोमय अलग २

भरकर वेदीके उत्तरकी ओर धनु कन्या मिथुन मीन वृषभ तथा मेष इन लग्नोंमें स्थापन करे अर्थात् धनुलग्नमें जौका सकोरा कन्यालग्नमें उड़दका सकोरा, मिथुनलग्नमें तिलका सकोरा, मीनलग्नमें धानका सकोरा, वृषभलग्नमें शमीके पत्तेका सरा और मेषलग्नमें गोमयका सकोरा स्थापन करे। मुण्डनके समय ये सकोरा बालकके समीप रख लेवे पूर्णकुम्भके सामने छुरा, कैंची, छुरा घिसनेकी पथरी और सात दाभ रखकर उसपर पुष्प गंध अक्षत छोड़ देवे।

माता स्वयं बालकको गोदमें बिठालेवे। पिता स्नान कर बालकके सामने खड़ा होवे। तथा एक हाथमें गरमपानीका बर्त्तन दूसरे हाथमें ठंढे पानीका बर्त्तन लेकर उन दोनों बर्त्तनोंके जलको किसी तीसरे पात्रमें एक साथ डाले। उसी जलमें थोड़ी हल्दी, दहीका पानी और थोड़ा दही डाल दे। फिर बालकका पिता स्वयं अपने दायें हाथसे इसी जलमेंसे जल लेकर

बालकका मस्तक प्रदक्षिणा क्रमसे भिगोवे। अर्थात् प्रथम ही सामने फिर दाईं ओर, पीछे और बाईं ओर भिगोता चला जाय। जब सब बाल भींग जायं तब थोड़ासा मक्खन बालोंसे रगड़कर गरम पानीसे धो देवे अनन्तर उसे मंगलकलशके जलसे सिंचन कर गन्धोदकसे सिंचन करे।

दायां और बायां इस प्रकार मस्तकके दो विभाग होते हैं। मस्तकके दायें भागके तीन विभाग कल्पना करे। उन तीन विभागोंमेंसे प्रथम ही प्रथम विभागके बाल काटना आरम्भ करे। बाल काटनेका काम स्वयं पिताको करना उचित है।

प्रथम ही बालकके मस्तकके आगे धानका सकोरा रखकर बालकका पिता अपने बायें हाथमें पुष्प गंध दाभ लेकर बायें हाथके अंगूठे और उंगलियोंसे केशोंको पकड़कर दायें हाथमें कैंची लेकर " ओं नमोऽर्हते भगवते जिनेश्वराय

मम पुत्र उपनयनमुण्डमुण्डितो महाभागी भवतु भवतु स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर प्रथम स्थानके वाल काट कर स्त्रीको दे देवे। स्त्री भी "तथा भवतु" ऐसा कह वालोंको दूध घी मिले हुये कटोरेमें भिगो कर गोमयके सकोरेमें डाल देवे। अनन्तर द्वितीयस्थानके वाल काटे। इस वार बालकके सामने तिलका सकोरा रक्खे और "ओं नमः सिद्धपरमेष्ठिने मम पुत्रो निर्ग्रन्थ मुण्डभागी भवतु स्वाहा" यह मन्त्र पढ़े। शेष विधि पूर्वके समान ही करे। वाल काटकर उसी प्रकार स्त्रीको दे देवे। स्त्री भी उसी प्रकार दूध घीके सकोरेमें भिगो कर गोमयके सकोरे-में डालदेवे।

"ओं ह्रीं नम आचार्यपरमेष्ठिने मम पुत्रो निष्क्रान्तिमुण्डभागी भवतु स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर तृतीय स्थानके वाल काटे। इसवार जौका सकोरा बालकके सामने रक्खे। शेष विधि पहलेके समान करे।

दाईं ओरके वाल कट चुकनेपर बाईं ओरके वाल काटे। बाईं ओरके दो स्थान कल्पना करे। प्रथम स्थानके वाल " ओं नमः उपाध्यायपरमेष्ठिने मम पुत्र एन्द्रभागी भवतु स्वाहा " यह मन्त्र पढ़कर काटे तथा सामने उड़दका सकोरा रक्खे। शेष विधि पहलेके समान करे।

ओं नमः सर्वसाधुपरमेष्ठिने मम पुत्रः परमराज्यकेशभागी भवतु स्वाहा " यह मन्त्र पढ़कर द्वितीय स्थानके वाल काटे। सामने शमीके पत्तोंवाला सकोरा रक्खे। शेष विधि पूर्ववत् करे।

सब बाल कट चुकनेपर बालकके मस्तकको गरम जलसे धोडाले और "ओं ह्रीं पञ्चपरमेष्ठिप्रसादात् केशान्वयशिरोरचकुशली कुरु नापित " यह मन्त्र पढ़कर बालकका पिता नाईको छूरा दे देवे। नाई चोटी रखकर मुण्डन कर देवे।

उन केश और सकोरोंको किसी नदी अथवा तालावमें डलवा देवे। बालकको स्नान करा-

कर वस्त्रालंकारोंसे विभूषित कर घर ले आवे। घर आकर यक्ष देवको एक अर्घ्य देवे। तथा आचार्य पुण्याहवाचनको पढ़कर बालकको सेंचन करे। तथा नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर उसपर पीले चावल बखेरे। उपनयनमुण्डभागी भव, निर्ग्रन्थमुण्डभागी भव, निष्क्रान्तमुण्डभागी भव, परमनिस्तारक केशभागी भव, परमराज्य केशभागी भव, परमराज्यकेशभागी भव, आर्हन्त्य केशभागी भव।

आगत सज्जन जनोंका भोजन ताम्बूलादिकसे सत्कार करे।

लिपिसंख्यान।

(अक्षराभ्यास)

ततोऽस्य पञ्चमे वर्षे प्रथमाक्षरदर्शने।
ज्ञेयः क्रियाविधिर्नाम्ना लिपिसंख्यानसंग्रहः॥
यथाविभवमत्रापि ज्ञेयः पूजापरिच्छदः।
उपाध्यायपदेचास्य मतोऽधाती गृहव्रती॥

आदिपुराण पर्व ३८ १०२–१०३॥

लिपि संख्यान संग्रह अर्थात् बालकको अक्षराभ्यास कराना शास्त्रारम्भ यज्ञोपवीत संस्कारसे पहिले होना चाहिये। किन्तु शास्त्रारम्भ यज्ञोपवीतसे पीछे ही होता है। लिपिसंख्यान संस्कार पांचवें अथवा सातवें वर्षमें करना आचार्य सम्मत है।

इस संस्कारमें शुभ मुहूर्त्तकी बहुत भारी आवश्यकता है। योग वार नक्षत्र सब ही विद्या-वृद्धिकर होने चाहिये। अक्षरारम्भ करानेवाला उपाध्याय इस बातका खूब ध्यान रक्खे।

बालकके पाचवें* वर्ष और सूर्यके उत्तरायण होते हुये विद्यारम्भ कराना उत्तम है। मृग,

* नीतिकारोंका भी मत है "प्राप्ते तु पञ्चमे वर्षे विद्यारम्भं समाचरेत्"। अर्थात् पांचवें वर्षमें विद्यारम्भ करना चाहिये।

वारोंका फल इस प्रकार है। गुरुवारको विद्यारम्भ करनेसे बुद्धि अतिशय प्रकट होती है। बुध और शुक्रवारको बुद्धि बढ़ती है। रविवारको विद्यारंभ करनेसे आयु बढ़ती है। सोमवारको मूर्खता मंगलको मरण और शनिवारको विद्यारम्भ करनेसे शरीर क्षय होता है।

आर्द्रा, पुनर्वसू, पुष्य, आश्लेषा, मूल, हस्त, चित्रा, स्वाती, अश्विनी, पूर्वा, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, श्रवण, धनिष्ठा, शततारका ये नक्षत्र शुभ हैं गुरुवार उत्तम है। बुधवार शुक्रवार भी शुभ हैं, सोमवार रविवार मध्यम हैं, शनिवार मंगलवार निन्द्य और निकृष्ट हैं। इस प्रकार योग और लग्न आदिक भी देखकर मुहूर्त्त निश्चित कर लेना चाहिये।

जिसदिन मुहूर्त्त निकले उसदिन प्रथम ही श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा तथा गुरु और शास्त्रकी पूजा कर पूर्वके समान होम करे। अनन्तर बालकको स्नान कराकर वस्त्र अलंकार पहनाकर चंदन लगाकर विद्यालय अथवा पाठशालामें ले जावे। वहांपर बालकसे जयादि पांच देवताओंको एक अर्घ्य दिलाकर प्रणाम करावे। पढानेवाले गुरु महाशयको वस्त्र अलंकार फल और कुछ द्रव्य भेट देकर बालक स्वयं हाथ जोड़ नमस्कार करे।

गुरु महाशय स्वयं पूर्वदिशाकी ओर मुखकर बैठें तथा बालकको अपने सामने पश्चिम दिशाकी ओर मुखकराकर बिठावे और उसे धर्म अर्थ काम इन तीनों पुरुषार्थोंका सिद्ध करने योग्य बनानेके लिये अक्षरारम्भ संस्कार प्रारंभ करे।

प्रथम ही उपाध्याय एक बड़े तखतेपर अखंड चावलोंको बिछावे और उसपर हाथसे "ओं नमः सिद्धेभ्यः" यह मन्त्र लिखकर "अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः" ये स्वर और "क ख ग घ ङ,च छ ज झ ञ,ट ठ ड ढ ण,त थ द ध न,प फ ब भ म,य र ल व श ष स ह " ये व्यंजन लिखे। अनन्तर बालकके दोनों हाथोंमें सफेद पुष्प और अक्षत देकर लिखे हुये अक्षरोंके समीप रखवा देवे। और फिर " ओं नमोर्हते नमः सर्वज्ञाय सर्वभाषाभाषितसकलपदार्थाय बालकमक्षराभ्यासं कारयामि द्वादशाङ्गश्रुतं भवतु भवतु ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर उन लिखे हुये अक्ष-

रोंके समीप ही बालकके हाथसे वहीं "ओं नमः सिद्धेभ्यः" मन्त्र और अकारसे हकार पर्यन्त अक्षर लिखावे।

यदि सामर्थ्य हो तो उपाध्याय सुवर्णके पत्रपर कुंकुम अथवा पिसी हुई केसर बिछाकर सुवर्णकी कलमसे लिखे और उसीसे बालकसे भी लिखावे। अनन्तर आचार्य (होमादि करानेवाला नीचे लिखे मन्त्र पढ़कर उस बालकपर पीले चावल बखेरे। "शब्दपारभागी भव, अर्थपारभागी भव, शब्दार्थसम्बन्धपारभागी भव।

इस प्रकार वह बालक गुरुके कथनानुसार अक्षरोंका अभ्यास करे। जब अक्षराभ्यास पूरा हो जाय तब पुस्तक पढ़ना प्रारम्भ करे। जिस दिन पुस्तक पढ़ना आरम्भ करे उस दिन श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा आदि पहलेके समान ही करना चहिये। बालक स्वयं वस्त्रालङ्कारादिकसे गुरु महाशयका सत्कार कर हाथ जोड़ पूर्वदिशाकी ओर मुखकर बैठे। और गुरु महाशय

सन्तोष पूर्वक उसे पुस्तक देवें। शिष्य प्रथम ही मंगल पाठ (मंगलाष्टक) पढ़े और फिर पुस्तक पढ़ना प्रारम्भ करे।

इति भद्रम्।

उपनीति।

क्रियोपनीतिर्नामास्य वर्षे गर्भाष्टमे मता।
यत्रापनीतकेशस्य मौंजीसव्रतबन्धना ॥
कृताहत्पूजनस्यास्य मौंजीवन्धो जिनालये।
गुरुसाक्षिविधातव्यो व्रतार्पणपुरस्सरम् ॥
शिखी सितांशुकः सान्तर्वासो निर्वेषविक्रियः।
व्रतचिन्हं दधत्सूत्रं तदोक्तो ब्रह्मचार्यसौ ॥
चरणोचितमन्यच्च नामधेयं तदास्य वै।
वृत्तिश्च भिक्षयान्यत्र राजन्यादुद्धवैभवात् ॥
सोन्तः पुरे चरेत्पात्र्यां नियोग इति केवलम्।
तदग्रं देवसात्कृत्य ततोन्नं योग्यमाहरेत् ॥

आदिपुराण पर्व ३८ श्लोक १०४ से १०८ तक।

इस संस्कारका नाम उपनीति, उपनयन

वा यज्ञोपवीत है। यह संस्कार ब्राह्मणोंको गर्भसे आठवें वर्षमें क्षत्रियोंको ग्यारहवें वर्षमें और वैश्योंको बारहवें वर्षमें करना चाहिये।

जिस किसी ब्राह्मणकी यह इच्छा हो कि मेरा बालक अधिक दिन तक ब्रह्मचारी रहकर विद्याध्यन करे। वह उस बालकका उपनयन पांचवें वर्षमें कर देवे। जिस क्षत्रियकी इच्छा बालकको बलिष्ठ बनानेकी है। वह छठे वर्षमें और जिस वैश्यकी इच्छा अधिक द्रव्योपार्जन करनेकी है वह अपने बालकका यज्ञोपवीत आठवें वर्षमें ही कर देवे।

यदि कारण कलापोंसे नियत समय तक उपनयन विधान न हो सका तो ब्राह्मणोंको सोलह वर्ष तक क्षत्रियोंको बाईस वर्षतक और वैश्योंको चौबीस वर्ष तक यज्ञोपवीत संस्कार कर लेना उचित है।

यह उपनीति संस्कारका अन्तिम समय है जिस पुरुषका यज्ञोपवीत संस्कार इस समय तक

भी नहीं हुआ है वह पुरुष उच्छृंखल होकर धर्म-पराङ्मुख हो सकता है। यज्ञोपवीत रहित पुरुष पूजा प्रतिष्ठादि करनेके अयोग्य होता है।

पुत्रोंके भेद—पुत्र सात प्रकारके माने हैं, अपना खास लड़का, अपनी लड़कीका लड़का, दत्तक (गोद) लिया हुआ, मोल लिया हुआ, पाला हुआ, अपनी बहिनका लड़का और शिष्य।

आचार्य*—यज्ञोपवीत करानेवाला आचार्य बालकका पिता हो सकता है, जो पिता न हों तो पितामह, (पिताके पिता) वे भी न हों तो पिताके भाई, (काका चाचा ताऊ वगैरह) वे भी न हों तो अपने कुलमें उत्पन्न हुआ कोई भी पुरुष, और जो ऐसा पुरुष भी न हो तो अपने गोत्रका कोई भी पुरुष आचार्य बनकर

* यदि बालकके पिता, पितामहादिक यज्ञोपवीत विधि न जानते हों तो अपने स्थानमें कोई दूसरा आचार्य नियत कर सकते हैं। आचार्य नियत करनेकी विधि शास्त्री विधानमें लिखी है।

यज्ञोपवीत करा सकता है।

यज्ञोपवीत—यज्ञोपवीत बनानेके लिये घर की स्त्रियोंसे ही सूत कतावे। कच्चे सूतको त्रिगुणित कर बट लेवे। तथा दूसरी वार फिर त्रिगुणित कर गांठ देकर यज्ञोपवीत बना लेवे। यज्ञोपवीतकी लम्बाई ब्रह्मस्थानसे (मस्तक परके तालु छिद्रसे) नाभिपर्यन्त होनी चाहिये। कम लम्बाईसे रोगादि पीड़ा और अधिक लम्बाईसे धर्म विघात होना आचार्य सम्मत है।

यज्ञोपवीत संस्कारके मुहूर्त्तदिनसे दश या सात या पांच दिन पहले नान्दीविधान किया जाता है इसको अति संक्षेप विधि यह है कि जिस दिन नान्दीविधान करना हो उस दिन वालकका पिता दो चार भाइयोंके साथ आचार्यके :घर जावे। यथासाध्य कुछ भेंट देकर विधि करानेकी प्रार्थना करे। आचार्य उस प्रार्थनाको सहर्ष स्वीकार करे। आचार्य समेत सब लोग वहांसे उठकर उसी समय जिनालयमें

आवें दर्शनपूजनादिक कर सभामण्डपमें बैठें। इस समय आचार्य फिर स्वीकारता देवे। पश्चात् सब लोग आचार्यको घर पहुंचाकर अपने अपने घर जायं।

जिस दिन शुभ ग्रह, योग, नक्षत्रादिक हों उसी दिन यज्ञोपवीत करे। प्रथम ही बालकको स्नान कराकर वस्त्राभूषण पहनावे तथा माताके साथ भोजन करावे। अनन्तर शिरके केशोंका मुंडन करावे, केवल शिखा शेष रहने दे। हल्दी, घी, सिन्दूर, दूर्वा-दूभ आदि मिलाकर बालकके शरीरसे लेपन करे। थोड़ा विश्राम लेकर स्नान करावे। अनन्तर आचार्य पुण्याहवचन पाठको पढ़ता हुआ कुशाओंसे पवित्र जल लेकर बालकको सिंचन करे।

इसी समय पुण्याहवचन पाठ समाप्त हो जानेपर नीचे लिखे मन्त्रोंसे सिंचन करे "परम-निस्तारकलिंगभागी भव, परमर्षिलिंगभागी भव, परमेन्द्रलिंगभागी भव, परमराज्यलिंग

भागी भव, परमार्हन्त्यलिंगभागी भव, परम निर्वाणलिंगभागी भव, इन मन्त्रोंसे सिंचन करनेके बाद बालकके शरीरको सुगन्धित द्रव्योंसे लेपन करे।

अनन्तर श्रीजिनेन्द्रदेवकी पूजा और होम प्रारम्भ करना चाहिये और जब यथाविधि समाप्त हो जाय, यज्ञोपवीत देनेका समय निकट आ जाय तब ग्रह स्तोत्र पढ़कर "णमोअरहंताणं" इत्यादि पंच नमस्कार मन्त्रका स्मरण करना चाहिये। उस समय बालक उत्तर दिशाकी ओर मुख कर पद्मासन बैठ अपने जन्मकी शुद्धि करनेकेलिये आखोंका टिमकार बन्द कर पिताके मुखको देखे। तथा पिता उसी शुभ मुहूर्त्तमें पुत्रके सन्मुख खड़ा होकर उसके मुखको देखे और उसके ललाटपर चन्दनका तिलक लगा देवे।

अनन्तर मौंजी पहनाना चाहिये। मूंजकी एक पतली रस्सी बांटकर उसे त्रिगुणित कर

बालकको कमरमें बांधने योग्य बना लेना चाहिये और "ओं ह्रीं कटि प्रदेशे मौंजी-बन्धं प्रकल्पयामि स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर बालककी कमरमें मौंजी १ और एक कोपीन (लंगोटी) बांध दे। तथा "ओं नमोऽर्हते भगवते तीर्थंकर परमेश्वराय कटिसूत्रं कौपीनसहितं मौंजीबन्धनं करोमि पुण्यबन्धो भवतु अ सि आ उ सा स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर मौंजीको हाथमें लेकर उसपर पुष्प और अक्षत डाले।

अनन्तर बालकका पिता रत्नत्रयके चिन्ह-स्वरूप यज्ञोपवीतको हल्दी और चन्दनसे रंगकर "ओं नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायार्हं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर उस बालकको २ पहनावे।

ओं नमोऽर्हते भगवते तीर्थंकरपरमेश्वराय

१ इसको कटि चिन्ह अर्थात् कमरका चिन्ह कहते हैं।
२ इसको उरोलिङ्ग अर्थात् छातीका चिन्ह कहते हैं।

कटिसूत्रपरमेष्ठिने ललाटे शेखरं शिखायां पुष्पमालां च दधामि मां परमेष्ठिनः समुद्धरन्तु ओं श्रीं ह्रीं अर्हं नमः स्वाहा"

यह मन्त्र पढ़कर ललाटपर तिलक दे, चोटीपर पुष्पमाला रक्खे। तथा बालक नवीन धोती दुपट्टा पहने, आचमन करे, तर्पण करे और श्रीजिनेन्द्रदेवको एक अर्घ्य देवे।

अनन्तर बालक हाथमें चन्दन अक्षत और फल लेकर दोनोंको जोड़ परमनिश्रेयस मोक्षकी अभिलाषा करता हुआ आचार्यसे व्रत मांगे, आचार्य भी श्रावकाचारके यथोचित व्रतका उपदेश दें। बालक उन्हें सहर्ष स्वीकार करे तथा ओं ह्रीं श्रीं क्लीं इत्यादि बीजमन्त्र और णमो अरिहंताणं इत्यादि पंच नमस्कार मन्त्र भी आचार्यसे सुनकर स्वीकार करे।

इस बालकका इस समय जो वेष है वह ब्रह्मचारीका है उसका यह ब्रह्मचर्य विवाह पर्यंत शुद्ध रहना उचित है।

अनन्तर अपने शरीरकी उंचाईके समान लम्बा दण्डा ले। इसका ऊपरका चौथाई भाग हल्दीसे रंग ले। बालक यह दण्डा हाथमें ले अग्निके उत्तरकी ओर खड़ा हो और पूर्वकी ओर मुख करके तीन अर्घ्य देवे। तथा अपने आसनपर आ बैठे।

इसी समय होमकी पूर्णाहुति देनी चाहिये। बालक स्वयं शमी अक्षत लाजा [खीलें] और घी नैवेद्यको मिलाकर तीन आहुति देवे ये आहुति शांतिके लिये दी जाती है।

फिर बालक होठोंको बंदकर मुख प्रक्षालन करे। अपने हाथोंको होमकी अग्निसे सेक कर तीन वार मुखसे लगावे। तथा अग्निकी स्तुति कर उसे विसर्जन करे।

अनन्तर बालक प्रथम ही अपना दायां पैर

चोटी शिरोलिङ्ग अर्थात् शिरका चिन्ह माना गया है यह सब शरीरमें उत्तम है क्योंकि श्रीजिनेन्द्रदेवके चरणारविन्दमें पड़नेका सौभाग्य इसीको है।

आगे रखकर होम मण्डपसे बाहर आवे, प्रथम ही माके समीप जाकर (मातर्भिक्षां देहि) माता भिक्षा दीजिये ऐसा स्पष्ट उच्च स्वरसे कहे। माता भी दोनों हाथोंसे चावल भरकर पुत्रको देवे। यह मातासे आई हुई पहली भिक्षा श्रीजिनेन्द्रदेवके लिये अर्पण करे। मातासे भिक्षा मांगनेके बाद भाई विरादरीके उपस्थित लोगों से भिक्षा मांगे सब लोग चांवल अथवा खाने योग्य कोई पदार्थ भिक्षामें देवें। भिक्षामें जो खाने योग्य पदार्थ मिलें उसे बालक स्वयं खानेके काममें लावे।

यज्ञोपवीत विधिमें यह भिक्षा विधि सबको करनी चाहिये। परन्तु राजपुत्र और अत्यन्त समृद्धशाली धनी लोगोंके लिये यह विधि आवश्यक नहीं है।

बालक जब भिक्षा मांग रहा हो, तब कुटुम्बके बन्धुवर्ग आकर उसे कहें कि "वत्स! तू अभी बालक है, देशान्तर जाने योग्य नहीं है

इसलिये यहां ही गुरूके समीप रहकर विद्याभ्यास कर।" बालक भी ये बचन सुनकर अपने यहां ही रहनेकी स्वीकारता देवे और भिक्षा मांगना बन्द करदे।

अनन्तर सब लोग बालकके साथ साथ श्री जिनालयमें जावें और दर्शन पूजनादि कर वापिस आवें।

उस दिन साधर्मी भाई विरादरीको भोजन कराना चाहिये तथा वस्त्र ताम्बूलादि उनकी भेंटकर उनका सत्कार करना चाहिये।

महीने महीने बाद यज्ञोपवीत बदलना चाहिये श्रावण महीनेमें श्रावणी (पौर्णिमा) के दिन अति संक्षेपसे होमादि क्रिया कर यज्ञोपवीत बदलना चाहिये।

यज्ञोपवीत होनेके एक१ वर्ष बादसे नित्य

यज्ञोपवीतके बाद विद्याध्ययनका समय है विद्याध्ययन गुरूआश्रममें रहकर भिक्षावृत्तिसे ही अच्छा होता है। पूर्ण ब्रह्मचर्य भी इसी प्रकार पल सकता है। इसी लिये यज्ञोपवीतके बाद भिक्षावृत्तिका विधान है।

सन्ध्या वन्दनादि* क्रिया करना उचित है।

यज्ञोपवीतकी संख्या—विद्यार्थीको तथा नियत कालतक ब्रह्मचर्य धारण करनेवालोंको एक, गृहस्थोंको दो यज्ञोपवीत धारण करना योग्य है। जिस गृहस्थके पास दुपट्टा न हो तो उसे तीन पहनना चाहिये। जिसे अधिक जीवित रहनेकी इच्छा है वह दो किंवा तीन पहने और जिसे पुत्रकी इच्छा है अथवा जिसे धार्मिक होनेकी इच्छा है वह पांच यज्ञोपवीत पहने।

एक यज्ञोपवीत पहनकर जप होमादि करना अयोग्य है क्योंकि सब व्यर्थ होता है।

जो यज्ञोपवीत गिर जाय अथवा टूट जाय तो स्नान कर अथवा स्नानका संकल्प कर दूसरा नवीन यज्ञोपवीत पहनना चाहिये। पहनते समय वही "ॐ नमः परमशान्ताय शान्ति-

* वर्षेऽतीते त्रिकालेषु संध्यावन्दनसत्क्रियाम्।
सदा कुर्यात् स पुण्यात्मा यज्ञोपवीतधारकः॥

कराय पवित्रीकृताई रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा" यह मन्त्र पढ़ना योग्य है।

एक एक यज्ञोपवीतके लिये पृथक् पृथक् एक एक बार मन्त्र पढ़ना चाहिये। यदि एक बार ही मन्त्र पढ़कर दो तीन अथवा पांच यज्ञोपवीत धारण किये जायंगे तो किसी एकके टूटनेसे सब टूटे हुए समझे जायंगे।

जो यज्ञोपवीत उतर जाय अथवा टूट जाय तो उसे किसी जलाशय (नदी तालाब आदि) में डाल दे।

ब्राह्मणोंको सूतका राजाओंको सुवर्णका और वैश्योंको रेशमका यज्ञोपवीत पहनना चाहिये।

व्रतावतरण।

व्रतचर्यामहं वक्ष्ये क्रियामस्योपबिभ्रतः।
कट्यूरुःशिरोलिङ्गमनूचानव्रतोचितम्॥

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक १०९

यज्ञोपवीतके बाद विद्याध्ययन करनेका समय है। विद्याध्ययन करते समय कटिलिङ्ग, (कमरका चिन्ह) ऊरुलिंग, (जंघाका चिन्ह) उरोलिंग (छातीका चिन्ह) और शिरोलिंग (शिरका चिन्ह) धारण करना चाहिये।

कटिलिंग१—इस विद्यार्थीका कटिलिङ्ग त्रिगुणित मौंजी बन्धन है जाकि रत्नत्रयका विशुद्ध अङ्ग और ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यका चिन्ह है।

ऊरुलिङ्ग२—इस विद्यार्थीका ऊरुलिङ्ग धुली हुई सफेद धोती है जो कि जैनमतको पालन करनेवालोंके पवित्र और विशाल कुलको सूचन करती है।

---

१ कटिलिङ्गं भवेदस्य मौंञ्जीबन्धं त्रिभिर्गुणैः।
रत्नत्रयविशुद्ध्यङ्गं तद्धि चिन्हं द्विजन्मनाम् ॥६९॥

२ तस्येष्टमूरुलिङ्गं च सधौतसितशाटकम्।
आर्हतानां कुलं पूतं विशालं चेति सूचने ॥७०॥

उरोलिङ्ग१—इस विद्यार्थीके हृदयका चिन्ह सात सूत्रोंसे बनाया हुआ यज्ञोपवीत है यह यज्ञोपवीत सात परम स्थानोंका सूचक है।

शिरोलिङ्ग२—विद्यार्थीका शिरोलिङ्ग शिरका मुंडन करना है। जो कि मन वचन कायकी शुद्धताका सूचक है।

प्रत्येक विद्यार्थीको ये ऊपर कहे हुये चारों चिन्ह धारण कर ब्रह्मचर्यकी विशुद्धताके लिये अहिंसादि अणुव्रत धारण करना चाहिये।

ऐसे विद्यार्थीको लकड़ीकी दतोन ताम्बूल अंजन और उवटनादि लगाकर स्नान करना

---

१ उरोलिङ्गमथास्य स्याद्ग्रथितं सप्तभिर्गुणैः।
यज्ञोपवीतकं सप्तपरमस्थानसूचकम् ॥७१॥

सप्त परम स्थानोंके नाम—सज्जातिपरमस्थान, सद्गृहस्थपरम स्थान, पारिव्राज्यपरमस्थान, सुरेन्द्रपरम स्थान, साम्राज्य परम-स्थान, आर्हंतपरम स्थान, और निर्वाण परम स्थान।

सज्जातिसद्गृहस्थत्वं पारिव्राज्यं सुरेन्द्रता।
साम्राज्यं परमार्हन्त्यं निर्वाणं चेति सप्तधा ॥

२ शिरोलिङ्गं च तस्येष्टं परं मौण्ड्यमनाविलम्।
मौण्ड्यं मनोवचःकायगतमस्योपबृंहितम् ॥

अनुचित है उसें शरीरको शुद्धिके लिये केवल दिनमें स्नान करना चाहिये।

ऐसा विद्यार्थी पलंग चारपाई आदिपर न सोवे न किसी दूसरेके शरीरसे अपना शरीर रगड़े। यह भूमिपर अकेला ही सोवे इसीमें इसके व्रतकी शुद्धता रह सकती है।

यज्ञोपवीत धारण करनेके पश्चात् इस विद्यार्थीको प्रथम ही उपासकाचार (श्रावकाचार) गुरुमुखसे पढ़ना चाहिये। गुरुमुखसे पढ़नेका अभिप्राय यह है कि श्रावकोंकी बहुतसी ऐसी क्रियायें हैं जो अनेक शास्त्रोंके मंथन करनेसे निकलती हैं गुरुमुखसे वे सहज ही प्राप्त हो सकती हैं। श्रावकाचार पढ़नेके बाद न्याय, व्याकरण, गणित, साहित्य आदि पारमार्थिक लौकिक विद्यायें पढ़े।

यह बालक जब तक विद्याध्ययन करेगा तबतक उसके यही वेष* और व्रत रहेंगे। जब

* पहले कहा जा चुका है कि यह वेष और व्रत इसके

विद्याध्ययन समाप्त हो जायगा तब इसका यह वेष और व्रत छूट जायंगे और गृहस्थोंके जो मूल गुण व्रत होते हैं वे ही इसके होंगे।

श्रावण मास और श्रवण नक्षत्रमें पूर्वके समान होमादि क्रिया करके कटिलिङ्ग मौंजी-का त्याग करे गुरुकी साक्षी पूर्वक वस्त्र पहने ताम्बूल खाय और शय्यापर सोवे। उसी समय आभरण और माला आदि पहने। जो वह लड़का शस्त्रोपजीवी क्षत्रिय है तो वह शस्त्र धारण करे और जो वैश्य है तो व्यापारादिमें लग जाय।

विवाह।

विवाहके पांच अङ्ग माने गये हैं। वाग्दान, प्रदान, वरण, पाणिपीडन, और सप्तपदी।

विवाह पर्यन्त रहते हैं सो ही आचार्योंका मत है " द्वादशवर्षा कन्या षोडषवर्षः पुमान् तौ प्राप्तव्यवहारौ " अर्थात् बारह वर्षकी कन्या और सोलह वर्षका पुरुष ये दोनों ही विवाह करने योग्य हैं इस लिये पुरुषको सोलहवें वर्षमें ही यह वेष त्यागना उचित है।

वाग्दान—वाग्दान विवाहसे एक महीने पहले किया जाता है। कन्या और वरपक्षके कुटम्बीजन किसी एक स्थानपर इकट्ठे हों। प्रथम ही मंगलकलश और गणधरदेवकी पूजन करना चाहिये और फिर कन्याका पिता वरके पितासे निवेदन करे कि पुत्र मित्र और कुटुम्बीजनोंके समक्ष संघ और देवोंकी साक्षी पूर्वक मैंने अपनी कन्या आपके पुत्रके लिये मन वचन कायसे प्रीति पूर्वक केवल धर्मवृद्धि होनेके लिये देना निश्चय किया है आप अपने पुत्रके लिये इसे स्वीकार कीजिये।

इसके उत्तरमें वरका पिता भी प्रतिज्ञा करे मैं आपकी कन्या अपने पुत्रके लिये अपनी वंशवृद्धि होनेके लिये इन्हीं संघ और देवोंकी साक्षी पूर्वक स्वीकार करता हूं।

अनन्तर कन्याका पिता अपना गोत्र आदि उचारण कर ताम्बूल अक्षत फल और कन्या वरके पिताके हाथमें देवे और निवेदन

करे कि मैं यह कन्या आपके पुत्रके लिये देता हूं, आप विवाहके लिये मंगल द्रव्य सम्पादन कीजिये।

उत्तरमें वरका पिता भी कहे कि मैंने यह कन्या अपने पुत्रके लिये स्वीकार की तथा वह ताम्बूल, फल, अक्षत आदि भी कन्याके पिताके हाथमें देवे। देश कालके अनुसार और भी ताम्बूल अक्षत फलादिक जिस किसीको देना लेना हो वे परस्पर देवें, लेवें।

प्रदान—देनेका नाम प्रदान है। यह विवाह समयसे कुछ काल पहले किया जाता है। वरका पिता वस्त्रालंकारादिसे विभूषित कन्याका आदर सत्कार कर उसे उत्तम वस्त्र कर्णभूषण हार आदि आभूषण देवे।

विवाहकी विधि।

अब यहांसे विवाह विधि लिखी जाती है। विवाहके एक दिन पहले अंकुरारोपण विधि की

जाती है। अंकूरारोपणके दिन वरको हल्दी आदि उवटन लगा स्नान कराकर वस्त्र और आभूषणोंसे विभूषित करे। वरकी माता सौभाग्यवती स्त्रियोंके साथ स्वयं दो घड़े लेकर बाजे गाजेसे किसी जलाशय (नदी, तलाव या कूंये) पर जाय। वहां फल गंध अक्षत पुष्पादिकसे जलदेवताकी पूजन करे। तथा उस जलसे वे दोनों घड़े भरे। पासकी किसी भूमिसे थोड़ीसी मिट्टी भी ले लेवे। यह सब सामान लेकर उसी तरह वापिस लौटे। प्रथम ही श्रीजिनालयमें जाकर दर्शन करे और फिर घर आकर पांच या सात मिट्टीके बड़े बड़े सकोराओंमें अथवा कुल्हड़ोंमें लाई हुई मिट्टी और एक घड़ाके जलसे धान, जौ, गेहूं आदि अन्न बो दे। यह क्रिया विवाहके लिये बनी हुई वेदीके समीप अथवा वेदीपर ही होनी चाहिये। दूसरे कलशको वेदीके सामने चावलके बनाये हुये स्वस्तिकपर रखदे तथा शुभ द्रव्योंसे उसकी पूजा करे। वेदीपर गृहदेवता

स्थापन कर दीप जलावे। एक सिल*लोढ़ेको कलावेसे (रंगे हुये डोरेसे) लपेटकर वेदीके सामने रक्खे। उसपर गुड़, जीरा, नमक, हल्दी और चावलोंके अलग अलग पांच पुंज रक्खे।

इस उपर्युक्त विधिको अंकुरारोपण कहते हैं यह विधि वर कन्या दोनोंके यहां होनी चाहिये। कन्याके यहां कन्याकी माता सब क्रिया करे।

अंकुरारोपणके पश्चात् आचार्य स्नान किये हुये वरको पुण्याहवाचन पढ़कर सिंचन करे। इसी समय केवल वरके यहां एक लघु होम होना चाहिये और वरको पिता आचार्य और इतर मंडलाके साथ भोजन करना चाहिये।

वर्त्तमान सज्जन उसे आशीर्वाद दें। उस-समय वर्त्तमान सज्जनोंका कुछ फल बांटना चाहिये।

वरण—विवाहके समय वर वर्त्तमान आये हुये सज्जनोंसे प्रार्थना करे कि मेरे लिये यह

* यह एक प्रकारका शस्त्र है।

कन्या स्वीकार कीजिये। उसी समय कन्याका पिता आये हुये सज्जनोंसे निवेदन करे १—गोत्रमें उत्पन्न हुये—२—के—३—के पौत्र—४—के पुत्र—५—के लिये—६—गोत्रमें हुये—७—की ८—की पौत्री—९—की पुत्री—१० देता हूं, आप लोग स्वीकार कीजिये। उत्तरमें आये हुये सज्जन भी कहें कि हम लोग इस सम्बन्धको स्वीकार करते हैं, यह सम्बन्ध बहुत अच्छा है। (इसे वरणविधि कहते हैं)

पाणिपीडन—कन्याका हाथ वरके हाथमें देकर वरसे कहे कि विवाही हुई इस कन्याको तू धर्म अर्थ कामसे प्रसन्न और पालन करना। यह क्रिया आचार्य स्वयं करें। इसीको पाणिपीडन कहते हैं।

---

१ यहां वरके गोत्रका नाम उच्चारण करे। २ यहां वरका नाम कहे। ३ वरके पितामह (पिताके पिता) का नाम। ४ यहां वरके पिताका नाम। ५ यहां वरका नाम कहे। ६ यहां कन्याके गोत्रका नाम। ७ यहां कन्याका नाम। ८ यहां कन्याके पितामहका नाम। ९ यहां कन्याके पिताका नाम। १० यहां कन्याका नाम कहें।

सप्तपदी—अग्नि कुंडकी प्रदक्षिणा करने-को सप्तपदी कहते हैं अथवा सप्त परमस्थानोंके स्पर्श करनेको भी सप्तपदी कहते हैं।

दूसरे दिन अर्थात् विवाहके दिन वर स्नान-कर शुद्ध वस्त्र और अलंकार पहन सफेद छत्र धारण कर बाजे गाजे और अपने कुटम्बी भाई बिरादरियोंके साथ वधूके घर जावे। जब यह वधू के दरवाजेपर पहुंचे तो कन्याके कुटुम्बी तथा भाई बिरादरीके लोग वरके सामने आकर उसे सादर घर ले जांय। वहां पवित्र श्वसुरालयमें सज्जनोंके साथ एक मंडपमें यह वर बैठे। इस मंडपपर सफेद चंदोवा तना रहना चाहिये तथा चावल आदि मंगल द्रव्य इधर उधर फैल रहने चाहिये। तोरण भी रहना चाहिये।

इस वरके जाने आनेमें यदि देश कुलाचारके अनुसार कोई व्यवहार या क्रिया होती हो तो वह वृद्ध स्त्रियोंके कहे अनुसार कर लेना चाहिये।

जब यह वर मंडपमें जा पहुंचे तब कन्याका

पिता उदम्बर आदि क्षीर वृक्षोंका बनाय हुआ एक काष्ठासन (काठका पाटा) डाले। वर उसपर बैठ जाय। कन्याकी मा आकर वरके पैर धोवे। यज्ञोपवीत और मुदरी आदि भूषण देवे। तथा पानीका एक अर्घ्य देवे। वर भी अर्घ्यका दोनों हाथोंमें लेवे और देखकर उंगलियोंके छिद्रोंद्वारा किसी वर्त्तनमें धीरे धीरे छोड़ दे। जिस जलसे वरका पैर धोया गया है उसे कन्याके पैरपर डाल दे तथा कन्याको भी एक अर्घ्य देवे।

अनन्तर कन्याका पिता किसी झारीमें वर-को शुद्ध जल देवे। जिससे वह आचमन करे।

एक कांसेके पात्रमें दही लाया जाय वह दही कांसेके पात्रसे ही ढका रहना चाहिये। आचार्य स्वयं इसे हाथमें लेकर ढक्कन खोल "ओं ह्रीं भगवतो महापुरुषस्य पुरुषवरपुंडरी-कस्य परमेष्ठि तेजसा व्याप्तलोकस्य लोकोत्तर-मंगलस्य मङ्गलस्वरूपस्य संस्कृत्य पादावर्घेणा-भिजनेनानुकृत्याय उद्वसितचत्वरेऽभ्यागताया-

भियोगवयोमधुपर्काय समदत्तिसमन्विताया र्घ्य-स्य पाद्यस्य विधिमाताय दध्यमृतं विश्राणयते जामात्रे अमुष्मै ओम् " इस मन्त्रसे उसे अभि-मन्त्रण कर " ओं नमोऽर्हते भगवते मुख्यमङ्ग-लाय प्राप्तामृताय कुमारं दध्यमृतं प्राशयामि भं वं ह्वः पः हः अ सि आ उ सा स्वाहा " यह मंत्र पढ़कर उस दहीमेंसे थोड़ा दही लेकर तीन बार करके वरको खिलावे।

अनन्तर कन्याका पिता वरको अपने यहां-के नवीन वस्त्र आभरण माला आदि पहनावे, पहनाते या देते समय यह नीचे लिखा हुआ श्लोक पढ़े—

*भूयात्सुपद्मनिधिसम्भवसारवस्त्रं

भूयाच्च कल्पकुजकल्पितदिव्यवस्त्रम्।

भूयात्सुरेश्वरसमर्पितसारवस्त्रम्

भूयान्मयार्पितमिदं च सुखाय वस्त्रम्॥

---

* हे वत्स! जो वस्त्र मैं तुझे देता हूं वह पद्मनिधिसे प्राप्त हुये वस्त्रके समान, कल्पवृक्षसे प्राप्त हुये दिव्यवस्त्रके समान तथा इन्द्रसमर्पित उत्तमवस्त्रके समान तुझे सुख देने वाला हो।

वर भी पहले पहने हुये वस्त्रोंको कन्याके भाईको देकर* नवीन वस्त्र पहने।

वरके यहांसे आये हुये वस्त्रालङ्कार मालादिक कन्याको पहनावे।

अनन्तर वेदीके सामने (प्रायः दक्षिणकी ओर) चावलोंका एक पुंज रक्खा जाय तथा कुछ ही अन्तर देकर उस पुंजके पूर्व दिशाकी ओर एक दूसरा पुंज रक्खा जाय दोनों पुंजोंके बीचमें एक सुन्दर वस्त्र टांगा जाय। इस वस्त्रके ऊपरके दोनों छोर कोई भी दो आदमी पकड़े रहें। वस्त्र टंग चुकनेपर कन्याका मामा वरको गोदीमें लेजाकर पश्चिम दिशाकी ओर रक्खे हुये पहले पुंजपर पूर्वकी ओर मुख करके खड़ा कर दे। वरका मामा कन्याको गोदीमें लेजाकर पूर्व दिशाकी ओर रक्खे हुए वस्त्रके उधर दूसरे पुंजपर पश्चिमकी ओर मुख करके खड़ा कर दे। भावार्थ—वरवधू दोनों आमने सामने मुख

* यह रीति देश कालके अनुसार बदल भी सकती।

करके खड़े हों किन्तु वस्त्र उनके मध्यमें रहे।

इस समय स्वयं आचार्य तथा वर वधूके माता पिता आदि सज्जन जन श्रीजिनेन्द्र देवका मंगलाष्टक स्तोत्र पढ़ें। मंगलाष्टक यह है।

श्रीमङ्गलाष्टकं प्रारभ्यते

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभा।
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधींदवस्थायिनः॥
ये सर्वेजिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः।
स्तुत्यायोगिजनैश्चपञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्॥१॥
सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं।
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः॥
धर्मःसूक्तिसुधाचचैत्यमखिलं चैत्यालयंश्र्यालयं।
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥
नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनेख्याताश्चतुर्विंशतिः।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश॥
ये विष्णुप्रतिविष्णुलाङ्गलधराः सप्तोत्तराविंशति-
स्त्रकाल्येप्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्

देव्योष्टौ च जयादिका द्विगुणिताविद्यादिकादेवताः
श्रीतीर्थङ्करमातृकाश्चजनकायक्षाश्चयक्ष्यस्तथा ॥
द्वात्रिंशत्त्रिदशाग्रहास्तिथिसुरादिक्कन्यकाश्चाष्टधा ।
दिक्पालादशचेत्यमीसुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥
ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसोवृद्धिंगताः पंच ये ।
ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येष्टौविधाचारणाः ॥
पंचज्ञानधरास्त्रयोपि बलिनो ये बुद्धिवृद्धीश्वराः ।
सप्तैतेसकलार्चितागणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥५॥
कैलाशोवृषभस्यनिर्वृतिमही वीरस्य पावापुरी ।
चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोर्हतां ॥
शेषाणामपिचोर्जयन्तशिखरी नेमी श्वरस्यार्हतो ।
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥
ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता ।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु ॥
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नंदीश्वरे ।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥७॥
यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो ।
यो जातः परिनिष्क्रमेणविभवो यःकेवलं ज्ञानभाक्

यः कैवल्यपुरः प्रवेशमहिमा संभावितास्वर्गिभिः ।
कल्याणनिचतानि पंच सततं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥
आकाशंमूर्त्यभावादघकुलदहनादग्निरुर्वीक्षमाप्त्या
नैःसंग्याद्वायुरापःप्रगुण समतयास्वात्मनिष्ठैः सुयज्वः
सोमःसौम्यत्वयोगाद्रविरितिच विदुस्तेजसः सन्निधाना
द्विश्वात्मा विश्वचक्षुर्वितरतु भवतांमंगलं श्रीजिनेश
यः कर्ता जगतां यमेकपुरुषं भव्याः समाचक्षते ।
येनादेशि हिताहितं मुनिजना यस्मै नमस्कुर्वते ॥
यस्माद्वेदपरम्परासमुदिना श्रीर्यस्य नित्यास्पदा ।
यस्मिन्नेव जगत्स्थितं स जिनपोनिश्रेयसायास्तुवः
इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः ॥
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैधर्मार्थकामान्विता ।
लक्ष्मीराश्रयने व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥१०

" इति मंगलाष्टकं समाप्तम् "

वस्त्रके हट जानेपर सुख और प्रीति बढ़ने-

के लिये वर कन्याका मुख देखे और कन्या वर-का मुख देखे। वर कन्याके मुखमें गुड़, जीरा ललाटपर चंदन-अक्षत और कंठमें माला डाले, कन्या भी वरके मुख ललाट और कंठमें ये सब चीजें डाले।

अनन्तर वरण और प्रदान किया करे, अर्थात् वर सम्बन्धी जन वरका गोत्र नाम पि-ताका पितामहका प्रपितामहका नाम उच्चारण कर इस वरके लिये यह कन्या स्वीकार करते हैं ऐसा उच्च स्वरसे तीन बार उच्चारण करें। इसके कहनेका प्रणाली यह है। "ओं एकेन प्रकाश्येन पूर्वेण पुरुषेण ऋषिणा प्रतीते—१—गोत्रे प्रजाताय—२—प्रपौत्राय—३— पौत्राय —४—पुत्राय—५—नामधेयाय अस्मै कुमाराय भवतः कन्यां वृणीमहे" वर सम्बन्धी जन यह

१ वरके गोत्रका नाम कहना चाहिये। २ यहां वरके प्रपि-तामह (परदादा) का नाम। ३ यहां वरके पितामह (दादा) का नाम ४ यहां वरके पिताका नाम। ५ यहां वरका नाम होगा

मंत्र तीन वार उच्चारण करें। उत्तरमें कन्या सम्बन्धी जन "वृणीध्वम्" [वरण कीजिये] ऐसा तीन वार वर सम्बन्धी जनोंसे कहे।

कन्या सम्बन्धी जन भी कन्याका गोत्र, नाम, पिता, पितामह प्रपितामहका नाम उच्चारण कर यह कन्या इस वरके लिये देता हूं ऐसा तीन वार उच्चारण करें इसकी प्रणाली यह है "ओं एकेन प्रकाश्येन पूर्वेण पुरुषेण ऋषिणा प्रतीते—६—गोत्रे प्रजातां—७—प्रपौत्रीं—८—पौत्रीं—९—पुत्रीं—१०—नामधेयां इमां कन्यां वृणीध्वम्" कन्या सम्बंधीजन यह मंत्र तीन वार उच्चारण करें। उत्तरमें वर सम्बंधीजन "वृणीमहे" ऐसा कहें।

अनन्तर कन्याका पिता कन्याका दायां हाथ सुवर्ण जल और अक्षत वरके दायें हाथमें देकर "ओं नमोर्हते भगवते श्रीमते वर्द्धमानाय श्रीव-

चाहिये। ६ यहां कन्याके गोत्रका नाम। ७ यहां कन्याके परदादाका नाम। ८ यहां कन्याके दादाका नाम ९ यहां कन्याके पिताका नाम। १० यहां कन्याका नाम होना चाहिये।

लायुरारोग्य सन्तानाभिवर्द्धनं भवतु, इमां कन्या-मस्मै कुमाराय ददामि झ्वीं क्ष्वीं ह्वीं हं सः स्वाहा" यह मंत्र पढ़कर ऊपरसे वरके हाथमें गन्धोदकको धारा छोड़े इसे कन्यादान कहते हैं।

फिर कोई एक सौभाग्यवती स्त्री वरके हाथमें अक्षत देवे। वर ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय स्वाहा" यह मंत्र पढ़कर उसमेंसे थोड़ेसे अक्षत लेकर वधूके मस्तकपर डाल दे। "ओं ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय स्वाहा" यह मंत्र पढ़कर फिर थोड़े अक्षत उसी वधूके मस्तकपर डाले और "ओं ह्रीं सम्यक् चारित्राय स्वाहा" यह मंत्र पढ़कर बचे हुए अक्ष-तोंको भी डाल दे। यह सौभाग्यवती स्त्री वधूके हाथमे भी थोड़ेसे अक्षत देवे। वधू ऊपर लिखे हुए मंत्रोंको ही पढ़कर इसी क्रमसे उन अक्षतों-को तीन बार करके वरके मस्तक पर डाल देवे।

प्रथम ही वर अपने हाथमें दूध घी लगा-कर कन्याकी अंजलीसे पोंछ देवे और थोड़ेसे अक्षत कन्याकी अंजलीमें डाल देवे। एकबार

फिर इसी तरह करे। अनंतर कन्याका पिता इसी प्रकार अपने हाथसे घी दूध लगाकर वरको अंजलीसे पोंछ देवे और थोड़ेसे अक्षत डाल देवे। इसी प्रकार फिर एकवार करे। फिर "ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय स्वाहा, ओं ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय स्वाहा, ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा, ये तीनों मंत्र पढ़कर तीन वार वर कन्याके मस्तकपर और कन्या वरके मस्तकपर क्रमसे अक्षत वखेर देवे।

कंकण बन्धन।

कंकण बांधनके सूत्रको हल्दीमें रंगकर एक वरको और दूसरा वधूको देवे। प्रथम ही वधू उस सूतमें मदन* फल अथवा सोने वा चांदीका एक मणि बांधकर "ओं जायापत्योरेतयोर्दृढील-पाययोरेतस्मात्परमाचतुर्थदिवसादाहोस्विदासप्त-मादिव्यापरमस्य पुरुषगुरुणामुपास्तिर्देवता नामर्थेनाग्निहोत्रं सत्कारोभ्यागतानां विश्राणनं वनोपकानामित्येवं विधातुं प्रतिज्ञायाः सूत्र-कंकणसूत्रव्यपदेशभाक् रजनीसूत्रं मिथो म-

* यह किसी जातिका फल होता है।

णिबध्नामि मणिं वसुधानिधये यथा पुनः प्रजायां । पयसा सह प्राशानं दीर्घमायुर्धनेषु तद्वर्चसे सौभाग्याय युनक्ति । मणिबन्धे प्रगृह्यते । यह मन्त्र पढ़कर वरके दाहिने हाथमें बांध देवे और फिर वर वधूके हाथमें यही मन्त्र पढ़कर उसी प्रकार सूतमें मदनफल अथवा सोने वा चांदीका मणि बांध देवे । इसी समय दोनोंका वस्त्र भी परस्पर बांध देना चाहिये । अर्थात् वरके दुपट्टे का ठोक वधूकी ओढ़नीके ठोकसे बांध देवे ।

अनन्तर वह दम्पति पहले स्थापन किये हुये दोनों पूर्ण कलशोंका दर्शन करे । तथा अग्नि-कुण्डके पश्चिमकी ओर काठके पटेपर बैठ जाय । ये काठके पटा नवीन उदम्बरके होने चाहिये और उनपर सफेद वस्त्र बिछा रहना चाहिये । वधू दाईं ओर और वर बाईं ओर पूर्वकी ओर मुख करके बैठे । अनन्तर वर वधूके दायें हाथके अंगूठेको पकड़ कर बाईं ओर बिठावे तथा नैवे-द्यकी एक आहुति दे । इस क्रियाके होते समय बाजे बजने चाहिये तथा मंगलाष्टकका पाठ होना चाहिये ।

अनन्तर उपाध्याय होमकुण्डके समीप बैठकर पुण्याहवाचनका संकल्प करे। वह संकल्प इस प्रकार है। "ओं अद्य भगवतो महापुरुषस्य पुरुषवरपुण्डरीकस्य परमेष्ठि तेजसा व्याप्तलोकालोकोत्तममङ्गलस्य मङ्गलस्वरूपस्य गर्भाधानाद्युपनयनपर्यन्तक्रियासंस्कृतस्यास्य नाम्नः कुमारस्योपनीतिव्रतसमाप्तौ शास्त्रसमभ्यसनसमाप्तौ समावर्त्तनान्ते ब्रह्मचर्य्याश्रमेणोत्तरे गृहस्थाश्रमस्वीकारार्थं अग्निसाक्षिकं देवतासाक्षिकं बंधुसाक्षिकं ब्राह्मणसाक्षिकं पाणिग्रहणपुरस्सरं कलत्रे गृहीते सति अनयो र्दम्पत्योः सर्वपुष्टिसम्पादनार्थं विधीयमानस्य होमकर्मणो नान्दीमुखे पुण्याहवाचनां करिष्ये।"

पुण्याहवाचनके अनन्तर पंचमंडल पूजन नवग्रह पूजन और होम करना चाहिये।

अनन्तर एक शिलापर सात अक्षतोंके पुंज रखकर उनमें सप्त परमस्थानका संकल्प कर वर वधूके दायें पावके अंगूठेको क्रमसे एक एक

पुंजका स्पर्श करावें। स्पर्श कराते समय क्रमसे नीचे लिखे मन्त्र पढ़े। ओं सज्जातये स्वाहा। ओं सद्गार्हस्थाय स्वाहा। ओं परमसाम्राज्याय स्वाहा। ओं परमपारिव्राजाय स्वाहा। ओं परम-सुरेन्द्राय स्वाहा। ओं परमार्हन्त्याय स्वाहा। ओं परमनिर्वाणाय स्वाहा।

अनन्तर होमकी पूर्णाहुति देवे, पुण्याहवा-चन पढ़े तथा अग्निकुंडकी प्रदक्षिणा देवे। शान्ति पाठ पढ़कर शान्तिधारा देवे। एक अर्घ्य देवे, प्रणाम करे।

फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर भस्म ग्रहण करे। ओं भगवतां महापुरुषाणां तीर्थकराणां तद्देशानां गणधराणां शेषकेवलिनां भवन-वासिनामिन्द्रा व्यन्तरज्योतिष्का इन्द्राः कल्पा-धिपा इन्द्राः सम्भूय सर्वेप्यागता अग्निकुण्डके चतुरस्त्रिकोणवर्तुलके वा अग्नीन्द्रस्य मौलेरुद्धृ-तं दिव्यमग्निं तत्र प्रणीतेन्द्रादीनां तेषां गार्ह-पत्याहवनीयौ दक्षिणाग्निरिति नामानि त्रिधा

विकल्प्यहि श्रीखण्डदेवदार्वाद्यैस्तरां प्रज्वाल्य तानर्हदादिमूर्त्तीन् रत्नत्रयरूपान्विचिन्त्योत्सवेन महता सम्पूज्य प्रदक्षिणीकृत्य ततो दिव्यं भस्मादाय ललाटे दोः कंठे हृदये समालभ्य प्रमोदेरन् तद्वदिदानीं तानग्नीन् हुत्वा दिव्यैर्दिव्यैस्तस्मात्पुण्यं भस्मसमाहृतमनयोर्दम्पत्योश्च भव्येभ्यः सर्वेभ्यो दीयते। ततः श्रेयो विधेयात्, कल्याणं क्रियात्, सर्वाण्यपि भद्राणि प्रदेयात्। सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

अनन्तर आचार्य नीचे लिखा आशीर्वाद पढ़े।

मनोरथाः सन्तु मनोज्ञसम्पत्।
सत्कीर्तयः सम्प्रति सम्भवन्तु वः॥
व्रजन्तु विघ्ना निधनं बलिष्ठाः।
जिनेश्वरश्रीपदपूजनाद्वः॥ १॥
शान्तिःशिरोधृतजिनेश्वरशासनानां।
शान्तिर्निरन्तरतपोभरभाविताना्म्॥
शांतिः कषायजयजृम्भितवैभवानां।
शांतिः स्वभावमहिमानमुपागतानाम्॥२॥

जीवंतु संयमसुधारसपानतृप्ता।
नंद्न्तु शुद्धसहजोदयसुप्रसन्नाः॥
सिद्ध्यन्तु सिद्धसुखसङ्गकृताभियोगा-
स्तीव्रास्तपंतु जगतां त्रितये जिनाज्ञाः॥३॥
श्रीशांतिरस्तु शिवमस्तु जयोऽस्तु नित्य-
मारोग्यमस्तु तव पुष्टिसमृद्धिरस्तु।
कल्याणमस्त्वभिसुखस्य च वृद्धिरस्तु
दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनं सदास्तु॥

सूतक विचार।

क्षत्रियवैश्यविप्राणां सूतकाचरणं विना।
देवपूजादिकं कार्यं न स्यान्मोक्षप्रदायकम्॥

जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य सूतक पालन नहीं करते उनका किया हुआ देव पूजादिक कार्य मोक्षदायक नहीं होता।

सूतक चार प्रकारका माना गया है। ऋतु सम्बन्धी, प्रसूति सम्बन्धी, मृत्यु सम्बन्धी और किसी सूतकसे अशुद्ध मनुष्यके संसर्ग संबंधी।

ऋतुसम्बन्धी अशौच।

ऋतुके भेद—ऋतु, रज, पुष्प ये ऋतुके ही वाचक शब्द हैं। स्त्रियोंके यह ऋतु दो तरहसे होता है एक स्वाभाविक और दूसरा रोगादिक विकारसे।

स्त्रियोंके स्वाभाविक ऋतु महीने महीने पीछे हुआ करता है, और किसी गरम वस्तुके खा लेनेसे अथवा किसी रोगादिकके हो जानेसे जो महीनेके भीतर ही ऋतु हो जाय उसे विकृत अथवा विकारजन्य ऋतु कहते हैं।

स्त्रियोंका ऋतु यदि अकालमें हो तो उसका अशौच नहीं माना जाता। ध्यान रहे कि पचास वर्षसे ऊपर अकाल संज्ञा है। अर्थात् यदि पचास वर्षसे अधिक आयुवाली स्त्रियां ऋतुमती हों तो उनका अशौच नहीं गिना जाता।

अशौचकी विधि—स्त्रियोंको जिस दिन रजोदर्शन हो उससे तीन दिन तक अशौच पालन करना चाहिये। अशौचके दिनोंकी सं-

भावकी रीति यह है कि यदि दिन हो तब तो कोई बात ही नहीं है उसी दिनसे अशौच माना जायगा। यदि अर्द्ध रात्रिका पहला भाग हो तो उसके पूर्व दिनसे अशौच गिनना चाहिये। अथवा रज मृत्यु या प्रसूति सूर्योदयके पहले रात्रिके किसी समयमें हों उस रात्रिके पहले दिनसे ही गिनना चाहिये। यह किसी एक आचार्यका मत है। अथवा किसी आचार्यका मत यह है कि रात्रिके तीन भाग करो उनमेंसे पहलेके दो भाग उस रात्रिके पूर्व दिनमें और अंतका भाग अगले दिनमें गिनना चाहिये। यह समय विभाग चारो प्रकारके सूतकोंमें समझ लेना चाहिये।

असमय रजस्वला हुई स्त्रीका विचार—ऋतुसमय व्यतीत हो जानेपर अर्थात् तीन दिन व्यतीत हो जानेपर ऋतु दर्शनके १८ दिनके भीतर ही कोई स्त्री रजस्वला हो जाय तो उसकी शुद्धि केवल स्नान मात्रसे हो जाती है।

यदि अठारहवें दिन स्त्री रजस्वला हो तो दो दिन और जो उन्नीसवें दिन अथवा इससे आगे स्त्री रजस्वला हो तो तीन दिन अशौच मानना उचित है।

यदि कोई स्त्री अत्यन्त यौवन शालिनी हो और १८ वें दिन रजस्वला हो जाय तो उसे तीन दिनका ही अशौच मानना चाहिये।

रजस्वला स्त्रीका आचार—जो स्त्री समय-पर ऋतुमती हुई है वह पतिव्रता दाभके आसनपर शयन करे, स्वस्थ चित्त हो एकांत स्थानमें निवास करे, किसी पुरुष वा स्त्रीसे स्पर्श न करे मौन धारण करे, अथवा देव चर्चा तथा धर्म-चर्चा न करे, हाथमें मालती माधवी (मोगरा) कुंद आदि सफेद फूलोंकी माला लिये रहे। तीन दिन तक ब्रह्मचर्य पालन करे। तीनों दिन एकबार भोजन करे। गोरस (दूध दही) न खाय, अंजन न लगावे, उबटन न करे गलेमें माला न पहने, चंदनादिक न लगावे, अलंकार

न पहने, देव गुरू और राजाका दर्शन न करे, अपना मुख दर्पणमें न देखे, किसी कुदेवको न देखे।

वृक्षके नीचे सोवे नहीं, खाटपर सोवे नहीं दिनमें सोवे नहीं, हृदयमें पंच नमस्कार मंत्रका ध्यान करे अथवा श्रीजिनेन्द्रदेवका स्मरण करती रहे। हाथकी अंजलीसे पानी पीवे अथवा पत्तोंके दोनेमें अथवा तांवेके वर्त्तनमें पीवे। ऐसे ही वर्त्तनोंमें भोजन करे। यदि वह कांसेके वर्त्तनमें भोजन करे अथवा पानी पीवे तो फिर उस वर्त्तनको अग्निसे शुद्ध करना चाहिये।

रजस्वला स्त्रीकी शुद्धि—इस प्रकार तीन दिन बीत जानेपर वह रजस्वला स्त्री चौथे दिन गोसर्गसे पहले पहले स्नान करे। (प्रातःकाल-की छह घड़ियोंकी गोसर्ग संज्ञा है) चौथे दिन स्नान किये पीछे वह स्त्री अपने पतिके भोजना-दिक बनानेके लिये शुद्ध है। किन्तु देवपूजा गुरुकी उपासना और होम आदि करनेके लिये

पांचवें दिन शुद्ध होती है।

दो रजस्वला स्त्रियोंके परस्पर संभाषणादि करनेका प्रायश्चित्त।

दो रजस्वला स्त्री चतुर्थ स्नान करनेके पहले पहले यदि परस्पर संभाषण करें तो घोर पाप होता है। इस लिये उन दोनोंका संभाषण स्पर्शनादि त्याज्य कहा है।

यदि दो सजातीय रजस्वला स्त्रियां परस्पर संभाषण करें तो उन दोनोंको एक उपवास करना चाहिये। अर्थात् उन दोनोंके संभाषणका प्रायश्चित्त एक उपवास है। यदि वे दोनों स्त्रियां एक ही जगह रहें तो वे दो उपवास करें यदि वे एक साथ बैठकर भोजन करे तो उन्हें तीन उपवास करना कहा है।

यदि वे दोनों रजस्वला स्त्रियां विजातीय हों अर्थात् दोनों एक जातिकी न हों और परस्पर संभाषणादि करें तो उन दोनोंको दूना प्रायश्चित्त करना चाहिये। अर्थात् यदि परस्पर

संभाषण करें तो दो उपवास, यदि एक साथ रहें तो चार उपवास, यदि एक साथ बैठकर भोजन करें तो छह उपवास करना चाहिये।

यदि कोई ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यकी रजस्वला स्त्री किसी चांडालकी स्त्रीसे संभाषणादि करे तो वह उपर्युक्त कथनानुसार द्विगुणित प्रायश्चित्त-से शुद्ध हो सकेगी। यदि उन दोनों रजस्वलाओं-का एक ही गोत्र हो और वे परस्पर संभाषणादि करें तो उपर्युक्त ही प्रायश्चित्त कहा है।

जब स्त्री रजस्वला हो और बीचमें ही कोई जन्म सम्बन्धी अथवा मरण सम्बन्धी सूतक आ जाय अथवा किसी चांडालादिकस स्पर्श हो जाय तो उसे स्नानकर भोजन करना चाहिये।

यदि कोई स्त्री भोजन कर रही हो और बीचमें ही ऋतुस्राव होजाय तो वह मुंहका ग्रास छोड़कर स्नानकर भोजन करे। यदि उसे केवल शंका ही हो वास्तवमें ऋतुस्राव न हुआ हो तो वह केवल स्नान कर लेनेसे ही शुद्ध हो जाती है।

यदि किसी रजस्वला स्त्रीको तीन दिनके भीतर ही स्नान करनेकी आवश्यकता हो तो वह किसी वर्त्तनमें अलग जल लेकर स्नान करे किसी नदी या तालावमें डुबकी लगाकर स्नान न करे।

सूतकमें रजस्वला होनेपर विचार—जन्म अथवा मरण सम्बन्धी सूतक रहनेपर यदि कोई स्त्री रजस्वला हो तो उसके शिरपर अमृत मन्त्र पढ़कर जलका सिंचन करे। ऐसा करनेसे कुछ वह स्त्री शुद्ध नहीं हो जाती किन्तु एक सूतकमें दूसरा ऋतु सम्बन्धी जो अशौच लगा है उसकी शुद्धि हो जाती है। उसे अशौच ऊपर लिखे अनुसार पूर्ण रीतिसे पालन करना चाहिये।

किसी एक सूतकमें ऋतु सम्बन्धी अशौच लग जानेका प्रायश्चित्त मध्यम पात्रको यथोचित दान देना कहा है।

रजस्वलाके स्पर्श सम्बन्धी प्रायश्चित्त—

यदि कोई स्त्री रजस्वला हो जाय और उसे उसका ज्ञान न हो और वह किसी पदार्थोंको स्पर्श करे तो उसके द्वारा स्पर्श किये हुये पदार्थ तथा उन पदार्थोंके समीपवर्त्ती एक एक हाथ तकके पदार्थ अशुद्ध हो जाते हैं।

यदि कोई जन अपने अज्ञानसे अथवा किसी तरहसे रजस्वलाका स्पर्श किया हुआ अन्न भक्षण कर ले तो उसे एक अथवा दो उपवास करना उचित है।

रजस्वला स्त्रीकी समीपवर्त्ती भूमिमें चारपाई आसन वस्त्रादि यदि एक प्रहरसे कम समय तक भी रक्खे रहें तो वे अशुद्ध हो जाते हैं। जिस दीवालका सहारा लेकर रजस्वला बैठी हो उसी दीवालका सहारा लेकर उसी स्त्रीकी बराबरीमें यदि कोई बैठ जाय तो उसे वस्त्र सहित स्नान करना चाहिये।

स्त्रीके जब तक ऋतु स्राव होता रहे तब तक उसे अशौच पालना उचित है। ऋतुस्राव बंद

हो जानेपर वह स्त्री स्नान करे तथा उसके व-स्त्रादिक सब धोये जायं।

रजस्वला स्त्री जिस जगह भोजन करे, शयन करे, बैठे, खड़ी रहे वह सब जगह गोवर और पानीसे दो वारा लीपनी चाहिये।

रजस्वलासे स्पर्श करनेवाले बालककी शुद्धि

रजस्वलाके समीप रहनेवाला उसका लड़का यदि १६ वर्षका हो तो वह स्नान करनेसे शुद्ध होता है। यदि वह बालक अपनी माताका दूध पीता हो तो मन्त्रसे अभिमन्त्रण किये हुये जलका छींटा दे देनेसे शुद्ध होता है।

रजस्वलाके वर्त्तन सम्बन्धी प्रायश्चित्त—

रजस्वला स्त्रीने जिस वर्त्तनमें भोजन किया है उसको विना शुद्ध किये हुये यदि कोई उसमें भोजन करले तो वह वस्त्र सहित स्नान कर दो उपवास कर लेनेसे शुद्ध होता है।

यदि कोई पुरुष विना शुद्ध किये हुये रज-स्वला स्त्रीके वर्त्तन, वस्त्र, और भूमिको स्पर्श

करले तो वह स्नानकर १०८ वार अपराजित मन्त्रका जप कर लेनेसे शुद्ध होता है।

"अनुक्तं यद्यदत्रैव तज्ज्ञेयं लोकवर्त्तनात्"

रजस्वलाके सम्बन्धमें जो कुछ यहां नहीं कहा गया है वह लोकाचारसे समझ लेना चाहिये।

जन्म सम्बन्धी अशौच।

जन्म सम्बन्धी सूतक तीन प्रकार है। स्राव-सम्बन्धी, पातसम्बन्धी और जन्मसम्बन्धी।

यदि तीसरे और चौथे महीनेमें गर्भ गिर जाय तो उसे स्राव कहते हैं। यदि पांचवें या छठे महीनेमें गर्भ गिर जाय तो उसे पात कहते हैं। सातवें आठवें नौवें दशमें महीनेमें प्रसूति कहलाती है।

गर्भस्रावका सूतक माताको यदि स्राव तीसरे महीनेमें हो तो तीन दिनका, यदि चौथे महीनेमें हो तो चार दिनका होता है। पिता और कुटुम्बी जन केवल स्नान कर लेनेसे ही शुद्ध हो जाते हैं।

गर्भपातका सूतक माताको यदि पात पाचवें महीनेमें हो तो पांच दिनका यदि छठे महीनेमें हो तो छह दिनका कहा है। पिता और कुटुम्बी जनोंको एक दिनका सूतक मानना कहा है।

यदि प्रसूति हो तो माता पिता और कुटुम्बी जनोंको दश दिनका सूतक होता है। यही सूतक क्षत्रियोंको बारह दिनका और शूद्रको पंद्रह दिनका मानना चाहिये।

साधारण नियम—जहां ब्राह्मणोंको तीन दिनका सूतक कहा हो वहां वैश्योंको चार दिनका क्षत्रियोंको पांच दिनका और शूद्रोंको आठ दिनका मानना उचित है।

यदि पुत्र उत्पन्न हुआ हो तो माताको १० दिनका तो ऐसा सूतक लगता है जिसमें १० दिन तक उसका मुख कोई न देख सके इसके सिवाय २० दिनका अनधिकार सूतक उसे और लगा करता है। अनधिकार सूतकमें भी

देव पूजादिका अधिकार उसे नहीं है। यदि कन्या हो तो १० दिनका अनिरीक्षण सूतक (जिसमें उसका कोई मुख न देख सके) और ३० दिनका अनधिकार सूतक लगता है।

यदि बालकका पिता जच्चाके साथ उसका स्पर्श करना, उसके पास बैठना आदि व्यवहार करे तो अनिरीक्षण लक्षण सूतक उसे भी लगा करता है।

मरणसम्बन्धी सूतक।

यदि बालक जीवित उत्पन्न हुआ हो और नाल काटनेसे पहले ही मर जाय तो माताको जन्म सम्बन्धी पूर्ण सूतक अर्थात् १० दिनका माना गया है। पिताको तथा अन्य कुटुम्बीजनों-को यह सूतक तीन दिन मानना चाहिये।

बालक यदि जीवित उत्पन्न हो और नाल काटनेसे पीछे मरजाय अथवा मरा हुआ ही उत्पन्न हो तो माता पिता और कुटुम्बीजनोंको पूर्ण १० दिनका सूतक मानना उचित है।

जिस बालकको उत्पन्न हुये १० दिन नहीं हुयें हैं वह यदि मर जाय तो माता पिताको जन्मसम्बन्धी सूतक पूर्ण ही मानना चाहिये। जन्मसम्बन्धी सूतक समाप्त हो जाने पर मरण सम्बन्धी सूतक भी समाप्त हो जाता है।

यदि बालक दशवें दिन ही मरजाय तो माता पिताको मरण सम्बन्धी सूतक दो दिनका और यदि ग्यारवें दिन मरे तो तीन दिनका मानना उचित है।

जिसके दांत निकल आये हैं ऐसा बालक यदि मर जाय तो माता पिता और भाइयोंको १० दिनका सूतक, प्रत्यासन्न कुटुम्बियोंको एक दिनका और अप्रत्यासन्न कुटम्बियोंको स्नान करने मात्रका सूतक होता है।

अपने ४ पीढ़ी तकके कुटुम्बीजन प्रत्यासन्न और चार पीढ़ीसे आगेके कुटुम्बी जन अप्रत्यासन्न (दूरवर्त्ती) कहलाते हैं।

सूतकके स्थापन करने, वस्त्रालंकार पहनाने,

ले जाने और दाह करनेमें प्रत्यासन्न कुटुम्बी-जन ही कहे हैं।

जिसका चौलकर्म—मुंडन हो गया हो ऐसा बालक यदि मरजाय तो माता पिता और भाइयोंको पूर्ण १० दिनका सूतक लगता है प्रत्यासन्न कुटुम्बीजनोंको ५ दिनका और अप्रत्यासन्न कुटुम्बियोंको एक दिनका सूतक लगता है।

जिसका उपनयन—जनेऊ हो चुका है ऐसे बालकके मरजाने पर माता पिता और प्रत्यासन्न कुटुम्बियोंको १० दिनका सूतक लगता है। पांचवी पीढ़ीके कुटुम्बीजनोंको छह दिनका, छठी पीढ़ीके कुटुम्बीजनोंको चार दिन-का और सातवीं पीढ़ीके कुटुम्बीजनोंको तीन दिनका सूतक लगा करता है। सातवीं पीढ़ीसे आगेके कुटुम्बीजनोंको सूतक नहीं कहा है उनकी शुद्धि केवल स्नान मात्रसे हो जाती है।

विशेष—यदि मरण सम्बन्धी एक सूतक

लगा हो और उसके अनन्तर एक दूसरा सूतक मरण सम्बन्धी और आजाय तो पहला सूतक समाप्त होजानेसे दूसरा सूतक भी समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार जन्म सम्बन्धी एक सूतकमें जन्मसम्बन्धी दूसरा सूतक आजाय तो पहला सूतक समाप्त हो जानेपर ही दूसरा सूतक समाप्त हो जाता है। तथा मरण सम्बन्धी सूतकमें जन्मसम्बन्धी सूतक आजाय तो पहला मरण सम्बन्धी सूतक समाप्त होनेपर ही दूसरा जन्म-सम्बन्धी सूतक समाप्त हो जाता है। परन्तु जन्मसम्बन्धी सूतक समाप्त होनेसे मरण-सम्बन्धी सूतक समाप्त नहीं होता।

देशान्तर सम्बन्धी सूतक।

जिस देशके बीचमें कोई बड़ी नदी हो अथवा कोई पर्वत हो अथवा जिस देशकी भाषा बदल जाय अथवा जो तीस योजन अर्थात् १२० कोस दूर हो उसे देशान्तर कहते हैं।

ऊपर जो अशौच कहा गया है वह केवल स्व-देशके लिये है। देशान्तरके लिये नहीं है।

देशान्तरमें मृत माता पिताका अशौच यदि देशान्तरमें माता पिताका मरण हो जाय तो पुत्रको उनके मरण दिनसे १० दिन तक अशौच मानना उचित है।

पति पत्नी सम्बन्धी अशौच—यदि देशान्तरमें पतिका मरण हो जाय तो पत्नीको और यदि पत्नीका मरण हो जाय तो पतिको मरनेके दिनसे दश दिन तक अशौच कहा है। यदि ये पति पत्नी दोनों ही परस्पर एकका मरण उसके मरनेके दश दिन वाद सुने तो उनको सुननेके दिनसे दश दिन तक अशौच मानना उचित है।

जैसे पुत्र अनेक वर्ष वाद भी माता पिताके मरनेका अशौच मानता है उसी तरह पति अथवा पत्नीको भी पत्नी अथवा पतिके मरनेका अशौच उनके वर्ष वाद भी मानना चाहिये।

इससे यह अभिप्राय निकलता है कि यदि पुत्र माता पिताके मरनेके समाचार अनेक वर्ष बाद सुने तो भी उसके लिये पूर्ण अशौच मानना कहा है।

यदि पुत्र पिताके मरनेके दश दिनके भीतर ही माताका मरण सुने तो वह पिताका अशौच समाप्त हो जानेके बाद माताका अशौच डेढ़ दिन और अधिक माने अर्थात् पिताका अशौच समाप्त होनेके डेढ़ दिन बाद ही माताका अशौच समाप्त हो जाता है।

यदि माताका मरण पहले हो जाय और उसके दशवें दिनके भीतर ही पिताका मरण हो जाय तो पिताके मरनेके दिनसे दश दिन तक अशौच मानना चाहिये। पिता सम्बन्धी अशौच समाप्त होनेपर पहले पिताका श्राद्ध (तेरहवीं) करे पीछे माताका श्राद्ध करे।

अथवा यदि माता पिता दोनोंका मरण एक साथ सुने तो दोनोंका अशौच एक साथ

माननां उचित है।

कन्यासम्बन्धी अशौच—यदि चौल-मुंडन संस्कार करनके पहले ही कन्याका मरण हो जाय तो माता पिता भाई बंधु आदि केवल स्नान कर लेनेसे ही शुद्ध हो जाते हैं। यदि चौल संस्कार होनेके वाद और व्रत ग्रहण करनेके पहले कन्याका मरण हो जाय तो एक दिनका अशौच यदि व्रत ग्रहण करनेसे पीछे और विवाह करनेसे पहले कन्याका मरण हो जाय तो तीन दिनका अशौच और यदि विवाह होनेके पीछे कन्याका मरण हो जाय तो उसके माता पिताको पक्षिणी* (दो दिन एक रात्रि) अशौच मानने कहा है। उसके भाई बंधुओंको केवल स्नान मात्र अशौच और उसके पति तथा पतिके कुटुम्बीजनोंको पूर्ण दश दिनका अशौच कहा है।

* दो दिन एक रात्रिको पक्षिणी, एक दिन एक रात्रिको अहोरात्र अथवा नैशिको (एकदिन) और तत्काल अर्थात् उसी समयकी सद्य संज्ञा है।

यदि पुत्री अपने पिताके घर प्रसव करे अथवा मर जाय तो दोनों ही अवस्थामें माता पिताको तीन दिनका और भाई बंधुओंको एक दिनका अशौच कहा है।

कन्याको माता पिता सम्बन्धी अशौच—किसी पुत्रीके माता पिताका मरण चाहे उस पुत्रीके घर हो या किसी दूसरे स्थानमें हो उस पुत्रीको ३ दिनतक अशौच मानना उचित है।

भाई बहिन सम्बन्धी अशौच—यदि बहिनके घर भाईका मरण हो जाय तो बहिनको तीन दिनका, तथा यदि भाईके बहिनका मरण हो जाय तो भाईको ३ दिन अशौच कहा है। यदि दोनोंका मरण अपने अपने घर हो अथवा किसी दूसरी जगह हो तो दोनोंके पक्षिणी (दो दिन एक रात्रि) पर्यन्त अशौच कहा है।

बहिनके मरनेका सूतक भाईको ही लगता है भाईको स्त्रीको नहीं। इसी प्रकार भाईके मरनेका सूतक बहिनको लगता है, बहनोई

(बहिनके पति) को नहीं लगता ।

यदि बहनोई अपने सालेका मरण सुने तो केवल स्नान करे और इसी प्रकार भौजाई अपनी ननदके मरनेके समाचार सुनकर केवल स्नान कर ले ।

नाना (मातामह) मामा आदि सम्बन्धी अशौच—नाना, नानी, मामा, मामी, नाती (लड़कीका लड़का) भानेज (बहिनका लड़का) फूफी (बापकी बहिन) मौसी (माकी बहिन) इनमेंसे कोई भी उसके घर आकर मर जाय तो उसे तीन दिनका सूतक मानना उचित है। यदि ये अपने अपने घर मरें तो उसे पक्षिणी पर्यन्त ही अशौच मानना कहा है। यदि इनका मरण दश दिन बाद सुने तो वह केवल स्नान मात्रसे शुद्ध हो जाता है।

विशेष—जो अनेक व्याधियोंसे पीड़ित हो, कृपण हो, जो सदा ऋणी (कर्जदार) रहता हो, जो क्रिया हीन हो, मूर्ख हो, स्त्रीके आधीन

हो, जिसका चित्त सदा व्यसनोंमें आसक्त रहता हो, जो सदा पराधीन हो, दान पूजादि कर रहित हो, नपुंसक, पाखण्डी, पापी हो, भ्रष्ट अथवा जाति पतित हो और जो दुष्ट हो इन लोगोंका अशौच इनके शरीर जल जाने पर्यन्त ही होता है अधिक नहीं। यदि इनके शरीरका दाह किया हो तो तीन दिनतक अशौच मानना उचित है।

जो व्रती है, दीक्षित है, यज्ञ करानेवाले हैं ब्रह्मचारी हैं इनको तथा राजाको केवल पिताके मरनेका अशौच लगा करता है और किसी प्रकारका अशौच इनके नहीं लगता।

श्रोत्रिय, आचार्य, शिष्य ऋषि, शास्त्राध्यापक, गुरु, मित्र, धार्मिक मनुष्य और सहाध्यायी इनके मरण हो जानेपर स्नान करना उचित है।

यज्ञ महान्यास आदि कर्म आरम्भ हो जाने पर बीचमें ही यदि कोई अशौच आजाय तो

वह तत्काल ही शुद्ध हो जाता है। इसी प्रकार यदि बहुत सा द्रव्य नष्ट हो जाय तो उसकी शुद्धि भी तत्काल ही हो जाती है।

यदि कोई पुरुष देशान्तर चला जाय और फिर उसके कोई समाचार न आवें और वह पूर्ववयस्क* हो तो २८ वर्ष बाद, यदि, वह मध्यमवयस्क हो तो १५ वर्ष बाद और यदि वह वृद्ध हो तो १२ वर्ष बाद उसका प्रेत कर्म (मरणसंस्कार) कर देना चाहिये। यदि प्रेत कर्म करनेके बाद वह फिर लौट आवे तो उसकी सर्वौषधि आदिसे स्नान कराकर उसके मौंजीबंधन (यज्ञोपवीत) आदि पूर्ण संस्कार करादेने चाहिये।

रजस्वला स्त्रीका मरण—यदि किसी रजस्वला स्त्रीका मरण हो जाय तो उसे दुग्ध जलसे स्नान कराकर नवीन वस्त्र पहनाकर दग्ध करना उचित है।

* साधारण रीतिसे आयुके तीन भाग कर प्रथम भाग आयुको धारण करने वालेको पूर्ववयस्क, दूसरेको मध्यमवयस्क और तीसरेको वृद्ध कहते हैं।

प्रसूता स्त्रीका मरण—यदि किसी प्रसूता (जच्चा) स्त्रीका मरण हो जाय तो उसको पुण्याहवाचन मन्त्रोंसे सिंचन कर स्नान कराकर विधि पूर्वक उसका दाह कर देवें।

गर्भिणी स्त्रीका मरण—यदि किसी गर्भिणी स्त्रीका मरण हो जाय और उसका गर्भ छह महीनेके भीतरका हो तो विधिपूर्वक उसका दहन कर देना उचित है। उसके गर्भच्छेदकी आवश्यकता नहीं है। यदि उसका गर्भ छह महीनेसे ऊपरका हो तो उसको श्मशानमें लेजाकर वहां उसके पति पुत्र पिता अथवा बड़ा भाइ इनमेंसे कोइ एक उसकी नाभिके नीचे बांई ओर गर्भच्छेद करे। अनन्तर पुण्याहवाचन मंत्रोंसे उसे सिंचन कर जीवित बालकको उठाकर भरण पोषण करनेके लिये दे देवे। तथा उस पेटको दही घीसे भरकर तृणको आच्छादन कर स्नान कराकर विधिपूर्वक उसका दहन कर देवे। यदि बालक जीवित न हो तो उसके

उठानेकी आवश्यकता नहीं है।

पतिके मरनेके १० दिनके भीतर ही यदि पत्नी (स्त्री) रजस्वला हो जाय अथवा प्रसूता * हो जाय तो वह यथा काल शुद्ध होनेपर स्नान कर आभरणादिका त्याग करे। अर्थात् यदि वह रजस्वला हुई है तो चौथे दिन स्नान कर आभरणोंका त्याग करे और यदि वह प्रसूता हुई है तो एक महीने बाद शुद्ध होकर आभरणोंका त्याग करे।

अपमृत्यु—बिजली, जल, अग्नि, चांडाल, सर्प, जाल, पक्षी, वृक्ष सिंह तथा अन्य पशु आदिसे जो मरण होता है उसे अपमृत्यु अथवा दुर्मरण कहते हैं यदि शास्त्रादिकसे आहत होकर सात दिनके भीतर ही मर जाय तो वह भी दुर्मरण ही कहलाता है। यह मरण पाप कर्मके उदयसे होता है।

आत्मघात—जो पुरुष विष शस्त्र अग्नि आदिकसे स्वेच्छापूर्वक अपने आत्माका घात

करता है उसे आत्मघात कहते हैं।

आत्मघात करनेवाले अथवा अपमृत्युसे मरनेवालेके कुटुम्बी जन देशकालादिकके भयसे उसी समय उसके संस्कार न कर सकते हों तो राजादिककी आज्ञा लेकर उसकी प्रेतक्रिया तो उसी समय कर देनी चाहिये। और फिर एक वर्ष पीछे शांतिक विधि प्रोषधोपवास आदि तप करके उसका प्रायश्चित्त करना चाहिये। यदि मरनेवाला अपनी इच्छा पूर्वक नहीं मरा है तो उसका प्रेतसंस्कार ही करना योग्य है। उसके लिये प्रायश्चित्त करनेकी आवश्यकता नहीं है।

आतुरस्नान—आतुर रोगीको कहते हैं। यदि कोई रोगी पुरुष सूतक समाप्त होनेके दिन स्नान न कर सके तो अन्य कोई नीरोगी पुरुष स्नान कर उस रोगीका स्पर्श करे, फिर स्नान कर स्पर्श करे, इस प्रकार दश वार स्नान कर उसका स्पर्श कर लेनेसे वह रोगी उस सूतकसे शुद्ध हो जाता है।

आतुरा ऋतुमती स्त्रीकी शुद्धि—यदि कोई ज्वरादि रोगसे पीड़ित ऋतुमती स्त्री चौथे दिन स्नान न कर सके तो अन्य स्त्री दश अथवा बारह वार स्नानकर स्पर्श कर लेनेसे और अन्त स्पर्शके बाद वस्त्र त्याग कर देनेसे वह ऋतुमती स्त्री शुद्ध हो जाती है।

शवदाह।

शवको कपड़े पहनाने ले जाने और दाह करनेके लिये अपनी जातिके चार मनुष्य नियत होने चाहिये।

एक सुन्दर विमान बनाकर उसमें उस शवको ऐसा शयन करावे जिससे वह हलने न पावे। उसके मुखादिक सब अङ्ग कपड़ेसे ढक दे तथा ऊपरसे काला कपड़ा डाल दे। ऊपर लिखे हुये चारो मनुष्य उस विमानको ले चलें। चलने में उस शवका मुख गांवकी ओर होना चाहिये। एक मनुष्य अग्निको भी साथ ले चले।

श्मशानकी आधी दूर जाकर विमानको नीचे रक्खे और उसका मुख पलटकर फिर ले चले। वहांसे उस शवकी जातिके मनुष्य आगे चलें और शेष मनुष्य तथा स्त्रियां उस विमान-के पीछे चले।

इस प्रकार उस शवको ले जाकर श्मशानमें उत्तर दिशाको ओर उसका मुख करके रखदें और उस समय उस शवकी खूब परीक्षा कर-लें कि वह जीता तो नहीं है।

अनन्तर चिता बनाई जाय। चिता बनाते समय "ओं ह्रीं ह्रः काष्ठसञ्चयं करोमि स्वाहा" यह मंत्र पढ़ना चाहिये।

अनन्तर उस शवको सिंचन कर चितापर स्थापन करे। शवको चितापर स्थापन करते समय "ओं ह्रीं ह्रौं अ सि आ उ सा काष्ठे शवं स्थापयामि स्वाहा" यह मन्त्र पढ़े।

१ चिता बनानेके आरम्भमें चिताके लिये प्रथम ही काठ रखते समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये।

अनंतर उस चिताकी तीन प्रदक्षिणा देकर घरसे लाई हुई अग्निको जलाकर उस अग्नि द्वारा "ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्निसंधुक्षणं करोमि स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर शवके मस्तक की ओर अग्नि संस्कार कर चिताको प्रज्वलित कर देवे। चिताको घीसे बराबर सिंचन करता जाय इस प्रकार पूर्ण शव जला देवे।

इस प्रकार शवका दाह कर्म कर जातिके सब लोग उस चिताकी प्रदक्षिणा देकर किसी नदी तालाब आदि जलाशयके समीप आवें।

चौरविधि—पूर्ण कपाल दहन हो जानेपर दाह करनेवाला कर्त्ता तथा जातिके लोग यथा योग्य चौर (मुंडन) करावें। माता, पिता, पितृव्य, (पिताका भाई) मामा, बड़ा भाई, श्वसुर, आचार्य, काकी, ताई, मामी, भावज, सासु, आचार्यानी, फूफी, मासी, बड़ी बहिन इसके मरनेपर चौर कर्म कराना उचित है। यदि इनका मरण सामने हो तो उसी समय चौर

करावे और यदि इनका मरण देशान्तरमें हो और एक महिनेके भीतर ही समाचार मिलें तो क्षौर कराना चाहिये। यदि एक महिनेके बाद समाचार मिलें तो क्षौर करानेको आवश्यकता नहीं है।

स्नान—अनन्तर सब लोग वस्त्र सहित स्नान करें अर्थात् सब लोग अपने अपने समस्त वस्त्रोंको धोकर स्नान करें। यदि तालाव नदी आदिका संयोग हो तो उसमें प्रवेशकर तीन बार डुबकी लगाकर स्नान करना अच्छा है। स्नान कर चुकने पर छोटी उमरवालोंको आगे करके सब लोग गांवको आवें।

वैधव्यदीक्षा

अर्थात्

विधवा स्त्रीका संयम

विधवा स्त्री अपने पतिके मरनेके बारहवें दिन पांच स्त्रियोंके साथ किसी तालाब नदी या कूप आदि किसी जलाशयपर जावे। वहां उन स्त्रियोंके साथ स्नान कर उन्हें फल गन्ध वस्त्र पुष्प ताम्बूल आदि द्रव्य भेट देवे। अन-

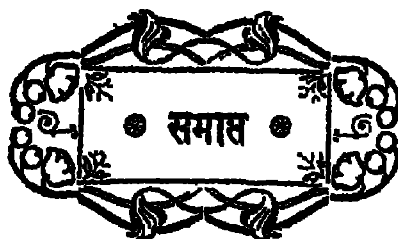
न्तर वह किसी अर्जिकाके समीप जाकर जिन दीक्षा अर्थात् अर्जिकाके व्रत ग्रहण करे। विधवा स्त्रीके लिये यह अति उत्तम उपाय है। यदि वह कारणवश अथवा शक्तिके न होनेसे जिनदीक्षा ग्रहण न कर सके तो फिर उसे वैधव्यदीक्षा अवश्य ही ग्रहण करना चाहिये।

वैधव्यदीक्षामें देश* व्रत ग्रहण करे, मंगल सूत्र कर्णाभूषण तथा शेष सब अलंकारोंका त्याग करे, धोती पहने, दुपट्टा चद्दर आदि ओढ़नेके वस्त्रसे मस्तकको ढके रहे। न पलंग पर सोवे न अञ्जन लगावे और न उबटन हल्दी तेल आदि लगाकर स्नान करे। शोक होते हुये भी रोवे नहीं और न विकथाओं†को कहे, न सुने। नित्य ही प्रातःकाल स्नान कर भगवान-की पूजा करे। प्रातःकाल मध्यान्हकाल और सायंकाल इन तीनों समयोंमें श्रीजिनेन्द्रदेवका स्तोत्र पढ़े, जप करे, शास्त्र पढ़े सुने तथा उसका

* अष्ट मूलगुणोंका धारण करना, पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत ये सब देशव्रत कहलाते हैं। ग्यारह प्रतिमा धारण करना भी देशव्रतमें शामिल है।

† स्त्री कथा राजकथा भोजनकथा और देशकथा ये चार विकथा कहलाती हैं।

चिन्तवन करे नित्य ही अनित्य अशरण आदि बारह अनुप्रेक्षाओंका चिन्तवन करे तथा अपने शुद्ध चैतन्यस्वरूप आत्माका चिन्तवन करे। प्रति दिन यथा शक्ति पात्र दान देवे तथा लोलुपता रहित एक बार भोजन करे। तम्बूल कभी न खावे। आदि :—



अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ! छप कर तैय्यार है!!

मल्लिनाथ पुराण

(सचित्र)—

(अनुवादक—पण्डित गजाधरलालजी शास्त्री, न्यायतीर्थ)

चौबीस तीर्थंकरोंमें भगवान मल्लिनाथ उन्नीसवें तीर्थंकर हैं विवाहके समय ही विभवका स्मरण हो जानेसे इन्होंने भोगोंसे सर्वथा विरक्त हो विवाह नहीं किया था। मल्लिनाथ पुराणमें बड़ी रोचकताके साथ इन्हीं भगवानके पवित्र चरित्रका वर्णन है। भगवान मल्लिनाथके पूर्वभवके जीव राजा वैश्रवणके भवसे इस पुराणमें उनके चरित्रका वर्णन किया गया है। एक बार प्रारम्भ कर देने पर फिर छोड़नेको जी नहीं चाहता, इसमें मुनिराज सुगुप्तका धर्मोपदेश भगवानके समवशरणका विस्तारसे वर्णन और उनका धर्मोपदेश मनन करने लायक है। भाषा भी बहुत सरल लिखी गई है। विशेष खूबी यह है कि संस्कृत पाठ भी साथमें रक्खा गया है इसलिये ग्रन्थका विशेष महत्व बढ़ गया है। पवित्र प्रेसमें पुष्ट सफेद कागज पर बड़े मोटे टाइपमें शुद्धता पूर्वक प्रकाशित किया गया है विशेष घटनाओंके बड़े मनोहर ३ चित्र भी रक्खे हैं। जिनसे चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ता है, सबका सार यह है, कि सुन्दरता पूर्वक ग्रन्थके प्रकाशनमें कोई भी कमी नहीं रक्खी है। न्योछावर ४) रुपया मात्र।

पद्मपुराण

सिद्ध पदको प्राप्त हुए रामचन्द्रजी महाराज तीसरे नारायण वीर लक्ष्मण, अग्निकुण्डमें कूद कर शीलकी परिक्षामें सर्वोच्च निकलनेवाली सती सीता, विवेकी विभीषण, स्वामिभक्त सुग्रीव, चरम शरीरी हनुमान्, पति सेवा परायण अञ्जना, मोक्षको प्राप्त हुए बलभद्र और नारायणको भी पराजित करनेवाले लवण अंकुश आदि आदि अद्भुत पराक्रम दिखलानेवाले महा पुरुषोंका यदि आपको जीवन चरित्र जानना है, तो सबसे पहिले पद्मपुराणजीका स्वाध्याय कीजिये। लोकमें प्रसिद्ध अनेक मिथ्या बातोंका सत्यांश ज्ञात हो जायगा। इसके सिवाय जैन पुराण कितने निष्पक्ष भावसे लिखे गये हैं और उनमें किस सत्यतासे काम लिया गया है इसका भी निदर्शन हो जायगा और सबसे बड़ी बात यह होगी कि वनमें एकान्त वास करनेवाले निष्परिग्रही मुनिराज किस तरहका भावुक हृदयस्पर्शी, आत्माको सच्चा सुख पैदा करनेवाले चरित्रको चित्रण करते हैं यह भी ज्ञात हो जायगा।

जो लोग दूसरोंकी रामायणादि पढ़कर रावणादि मनुष्योंको राक्षस समझते हैं उन्हें अवश्य ही एक बार स्वाध्याय करनी चाहिये। खुले पत्र, १ हजार पृष्ठ मोटे अक्षर एकरङ्गा चार चित्र (पावापुर, सम्मेद शिखर, पावागढ़, सोलह स्वप्न) तथा ध्यानस्थ जैनमुनिका तिनरङ्गा चित्र देख कर आप प्रसन्न हो जायंगे। न्योछावर ११) पोष्टेज १।) पृथक।

फायदेकी बात।

हमारे यहांसे जो प्राचीन शास्त्र खोज २ कर निकाले जा रहे हैं उनका लाभ सुगमतासे लोग ले सकें, इसलिये यह नियम बनाये हैं:—

(१) जो महाशय १) प्रवेश फी जमा करा देंगे उन्हें तमाम ग्रन्थ पोनी कीमतमें मिल सकेंगे।

(२) तीर्थों, मन्दिरों और जैन वाचनालयोंको आधे मूल्यमें ग्रन्थ बराबर मिला करेंगे, पर उन्हें पहिलेके निकाले हुए सब ग्रन्थ खरीदने होंगे।

(३) कार्यालयसे विशेष कर प्राचीन पुराण, मन्त्र-शास्त्र और सिद्धान्तके ग्रन्थ ही भाषा टीका सहित निकाले जायंगे।

(४) ग्रन्थोंका सम्पादन; विद्वान और अनुभवी व्यक्तियों द्वारा ही कराया जायगा।

(५) ग्रन्थ तैय्यार होनेसे १० दिन पूर्व ग्राहकोंको सूचना देकर वी० पी० की जायगी।

(६) १) रु० से कमकी वी० पी० नहीं की जायगी।

(७) २५) से अधिककी पुस्तकें मंगाते समय ५) पहचाल भेजना चाहिये।

(८) भेजनेवालेको अपना नाम, मुकाम, डाकखाना और जिला हिन्दी, गुजराती अथवा अंग्रेजीमें साफ साफ लिखना चाहिये रेलवे पार्सल के लिये स्टेशनका नाम लिखें।

सब तरहका पत्र व्यवहार करनेका पता:—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय
८१ लोअर चीतपुर रोड, कलकत्ता।